

लाईफ वर्सिटी

छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश और तेलंगाना से एक साथ प्रकाशित

वर्ष - 04 | अंक - 04 | सितम्बर 2026 | मूल्य 50 रु

GDP

GDP बढ़ी,
क्या जिंदगी बेहतर हुई?

हम कैसा
भारत
बना रहे हैं?



DairyDen

Premium icecream sundaes!

Good Food Makes Happy Moments! ♥

Happiness Served Fresh Every Day

From creamy ice cream sundaes to refreshing smoothies, fresh juices, beverages and delicious Italian-style pizzas — there's something for everyone!

Premium Ice Cream Sundaes



ICE CREAM SUNDAES



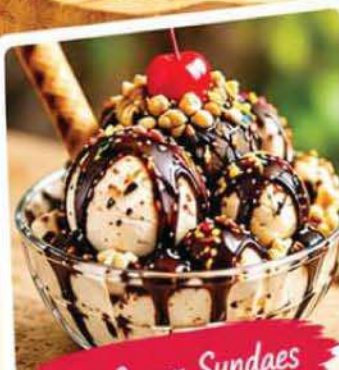
SMOOTHIES & LASSI



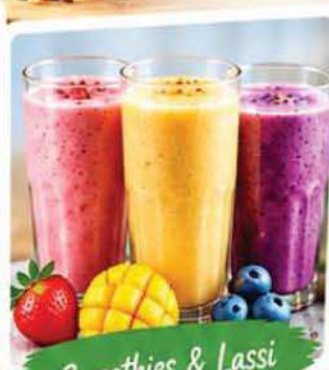
FRESH JUICES & COLD BEVERAGES



ITALIAN-STYLE PIZZAS



Ice Cream Sundaes



Smoothies & Lassi



Fresh Juices & Cold Beverages



Italian-Style Pizzas



VISIT US

9-1-66/68, #33, SD Road,
Opposite Domino's Pizza,
Secunderabad, Hyderabad,
Telangana - 500003



+91 6281 469 825



dairydenicecreams@gmail.com



www.dairydenicecreams.com



OPEN DAILY
11 AM - 11 PM

Come for the ice cream.
Stay for the happiness! ♥

Since 1996

सम्पादक

नरेन्द्र कुमार पाण्डेय



प्रबंधक

हर्षित पाण्डेय



सलाहकार मण्डल

डॉ अनिल गुप्ता

रायपुर

प्रो. डॉ शुभा सान्याल

नई दिल्ली



छत्तीसगढ़ कार्यालय

ए-32, आम्पाली सोसाइटी, कलर्स
मॉल के पीछे, पचपेड़ी नाका
रायपुर (छ.ग.)

मो. 88171-94979



मध्यप्रदेश कार्यालय

गोकुलधाम बेलौहान टोला,
सामान, रीवा मप्र



तेलंगाना कार्यालय

एफ-306, क्रिएटिव स्नेहा अपार्टमेंट,
मस्जिद बंदा, बॉटनिकल गॉर्डन रोड,
कोंडापुर, हैदराबाद-500084



प्रतिनिधि

अम्बुज अग्निहोत्री

जबलपुर

संजीव पाण्डेय

भोपाल

राजेश सिंह

बिलासपुर



कानूनी सलाहकार

संजयेंदु पंड्या



परिकल्पना

रजनीकांत पाण्डेय

समाचार स्रोत हमारे सभी संवाददाता/प्रतिनिधि। संदर्भ सामग्री:
इंटरनेट, प्रमुख समाचार पत्र एवं नामचीन पत्रिकाओं से सावर साभार।
विवादग्रस्त न्यायिक प्रकरणों का कार्यक्षेत्र रायपुर न्यायालय रहेगा।

अंदर के पृष्ठों पर



03

हम कैसा भारत बना रहे हैं?



8

स्क्रीन से नशे तक



13

विष्णु भैया सबके खेवईया



21

सोता
विपक्ष,
कटघरे में
जांच और
सवालों में
लोकतंत्र



26

फ़िल्में
हमारे
युवाओं
को किस
दिशा में ले
जा रहा
है?

मेडिकल हब या
मरीजों की
मजबूरी?

19



SCAN & PAY



UPI ID: 329944413263914@cnrb

लाईफ वर्सिटी के प्रचार-प्रसार
में सहयोग करें।



23

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक - नरेन्द्र कुमार पाण्डेय द्वारा प्रिंट वर्ल्ड, कंकालीपारा रायपुर (छ.ग.) से मुद्रित एवं 6, विकास विहार कालोनी, साईं
वाटिका, जोरातालाब के पास रायपुरा, रायपुर (छ.ग.) से प्रकाशित। संपादक- नरेन्द्र कुमार पाण्डेय, मो. 88171-94979

E-mail : scgnewsraipur@gmail.com www.scgnews.in

खतरे को पहचानने में हम क्यों चूकते हैं?

एक जगह चेतावनी थी, लेकिन हमला हुआ। दूसरी जगह इमारत जर्जर थी लेकिन लोग उसमें रहते रहे। और तीसरी जगह खतरा दिखाई नहीं देता, लेकिन धीरे-धीरे हमारे बच्चों का बचपन बदल रहा है। एक सवाल है, क्या किसी हादसे का इंतजार किए बिना हम खतरे को पहचान सकते हैं?

अगर जवाब हां है, तो फिर 13 साल पहले झीरम घाटी में मिले खतरे के संकेतों का क्या हुआ? अगर जर्जर इमारत किसी हादसे की चेतावनी दे रही थी, तो दिल्ली के सत्य निकेतन में मलबा बनने तक इंतजार क्यों हुआ? और अगर आज बच्चों का बढ़ता स्क्रीन टाइम उनके भविष्य के लिए खतरे की घंटी है, तो हम इसे आदत बनने से पहले रोक क्यों नहीं पा रहे? तीन घटनाएं हैं। तीन अलग-अलग संसार हैं। लेकिन इनके बीच एक सवाल बेहद गहरा है— हम खतरे को पहचानते कब हैं—पहले, या तब जब बहुत देर हो चुकी होती है?

25 मई 2013 को छत्तीसगढ़ की झीरम घाटी में कांग्रेस की परिवर्तन यात्रा पर हुए नक्सली हमले ने पूरे देश को झकझोर दिया था। 13 साल बाद 5 सितंबर 2026 को अदालत ने 10 आरोपियों को दोषी ठहराया। लेकिन झीरम की कहानी केवल अदालत के फैसले पर खत्म नहीं होती। सवाल आज भी है—इतना बड़ा हमला आखिर संभव कैसे हुआ? क्या सुरक्षा व्यवस्था में कहीं चूक हुई थी? क्या खुफिया सूचनाओं का सही आकलन हुआ था? क्या हमले के पीछे की पूरी साजिश कभी सामने आ पाएगी? यानी झीरम हमें सिर्फ नक्सली हिंसा की भयावहता नहीं बताता, बल्कि यह भी पूछता है कि क्या किसी बड़े खतरे के संकेतों को समय रहते गंभीरता से लिया गया था?

अब दिल्ली के सत्य निकेतन की घटना को देखिए। जर्जर इमारत का गिरना हमें फिर वही सवाल देता है। यदि किसी ढांचे की हालत पहले से खराब थी, यदि उसकी सुरक्षा को लेकर चेतावनियां थीं, तो कार्रवाई हादसे से पहले क्यों नहीं हुई? किसी इमारत का अचानक गिरना हमेशा अचानक पैदा हुई समस्या नहीं होती। कई बार दीवारों में दरारें पहले दिखाई देती हैं, ढांचा पहले चेतावनी देता है, खतरा पहले दस्तक देता है। लेकिन हम तब जागते हैं, जब मलबा सामने होता है।

और फिर तीसरा खतरा है—जो न गोली चलाता है, न इमारत गिराता है। वह है बच्चों का बढ़ता स्क्रीन टाइम। मोबाइल पहले मनोरंजन बनता है। फिर आदत। फिर जरूरत। और धीरे-धीरे निर्भरता। बच्चा मैदान से दूर होता है, परिवार से संवाद कम होता है और आभासी दुनिया वास्तविक दुनिया पर भारी पड़ने लगती है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की बच्चों के बढ़ते स्क्रीन टाइम को लेकर चिंता इसी व्यापक सामाजिक चुनौती की ओर संकेत करती है। सवाल यह नहीं कि तकनीक अच्छी है या बुरी। सवाल यह है कि तकनीक हमारे बच्चों को चला रही है या बच्चे तकनीक को? यानी तीनों घटनाओं में खतरे का स्वरूप अलग है, लेकिन चुनौती एक जैसी—संकेत मौजूद होने के बावजूद क्या हम समय रहते जागते हैं?

यहीं 'दिमागी नक्सल' जैसे शब्दों पर भी सावधानी से सोचने की जरूरत है। हिंसा, लोकतंत्र-विरोध और संवाद के रास्ते को बंद करने वाली मानसिकता निश्चित रूप से चिंता का विषय है। नक्सलवाद की हिंसक विचारधारा बंदूक के जरिए लोकतंत्र को चुनौती देती है। लेकिन हर असहमति को किसी खतरनाक ठप्पे में डाल देना भी लोकतांत्रिक समाज के लिए उचित नहीं। लोकतंत्र में सवाल पूछना अपराध नहीं है; हिंसा को सही ठहराना जरूर गंभीर समस्या है। इसी तरह 'नाराज फूफा' हमारे राजनीतिक-सामाजिक व्यवहार का एक दिलचस्प रूपक है। हर व्यवस्था में कुछ लोग हर बात से नाराज रहते हैं और हर घटना के बाद कहते हैं—'मैं तो पहले से कह रहा था।' लेकिन लोकतंत्र केवल शिकायत से नहीं चलता। सवाल जरूरी है, लेकिन समाधान का हिस्सा बनना उससे भी जरूरी है। और 'हनुमान अंश' जैसे संदर्भ हमें एक दूसरी दिशा दिखाते हैं—शक्ति के साथ सेवा, विरोध के साथ संयम और आस्था के साथ मानवता। समाज को आज इसी संतुलन की जरूरत है। आज समाज को ऐसे ही भाव की जरूरत है जिसमें शक्ति हो, लेकिन अहंकार न हो। सवाल हो, लेकिन द्वेष न हो। असहमति हो, लेकिन हिंसा न हो। और शिकायत हो तो उसके साथ समाधान की कोशिश भी हो।

तीनों घटनाएं हमें एक ही बात समझाती हैं कि खतरा हमेशा धमाके के साथ नहीं आता। कभी वह खुफिया संकेतों में छिपा होता है, कभी दीवार की दरार में और कभी बच्चे के हाथ में पकड़ी स्क्रीन में। इसलिए सवाल केवल यह नहीं होना चाहिए कि हादसा क्यों हुआ। सवाल यह भी होना चाहिए—हादसा होने से पहले हमने क्या किया था?

जिम्मेदार समाज वह नहीं जो हर त्रासदी के बाद जांच बैठाए। जिम्मेदार समाज वह है जो खतरे के संकेत मिलते ही जाग जाए। हमें हादसों के बाद जागने वाला समाज नहीं, संकेतों को पहले पढ़ लेने वाला समाज बनना होगा।



नरेन्द्र कुमार पाण्डेय
सम्पादक

हम कैसा भारत बना रहे हैं?

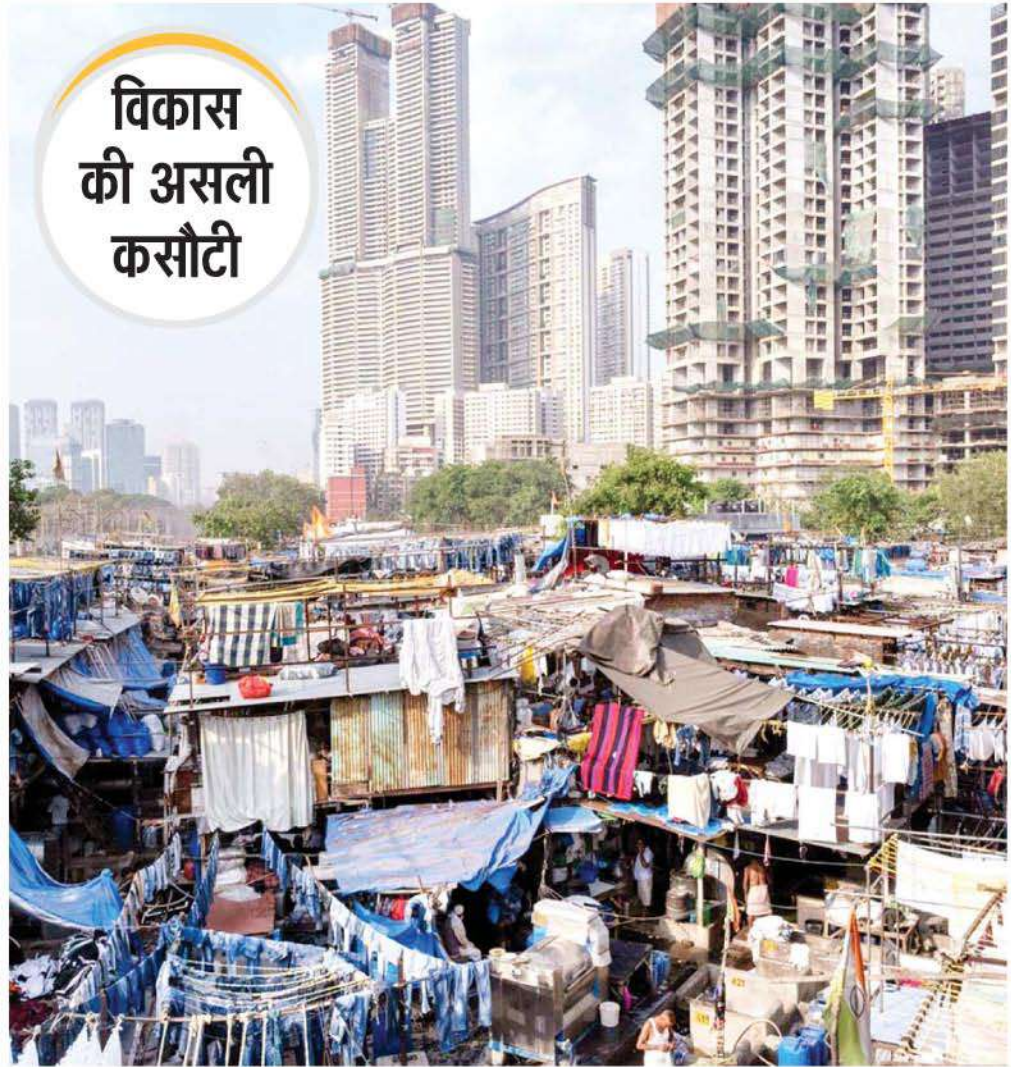
डॉ. नरेन्द्र पाण्डेय

किसी देश की सफलता केवल इस बात से नहीं मापी जानी चाहिए कि वह कितना बड़ा, शक्तिशाली और समृद्ध हुआ; बल्कि इस बात से कि उसके नागरिक कितने सुरक्षित, सम्मानित, सक्षम और आशावान हुए।

भारत बदल रहा है। अर्थव्यवस्था का विस्तार हो रहा है, सड़कें और शहर बढ़ रहे हैं, डिजिटल तकनीक जीवन का हिस्सा बन चुकी है और दुनिया के मंच पर भारत की आवाज पहले से अधिक आत्मविश्वास के साथ सुनी जा रही है। उपलब्धियों की यह तस्वीर प्रभावशाली है। लेकिन इसके बीच एक प्रश्न है, जिसे हमें बार-बार पूछना चाहिए—भारत बड़ा बन रहा है, लेकिन क्या भारत बेहतर भी बन रहा है? यही प्रश्न हमारी विकास यात्रा की सबसे महत्वपूर्ण कसौटी होना चाहिए।

भारतीय समाज की रोजमर्रा की चिंताएं—रोजगार, महंगाई, शिक्षा, स्वास्थ्य, भ्रष्टाचार और व्यवस्था पर विश्वास—दरअसल अलग-अलग समस्याएं नहीं हैं। इन्हें एक साथ देखें तो ये उस भारत की रूपरेखा बनाती हैं, जिसमें नागरिक रहना चाहता है। जनता किसी चमत्कार की अपेक्षा नहीं करती। वह एक रहने योग्य भारत चाहती है—जहां मेहनत का अर्थ हो, अवसर तक पहुंच निष्पक्ष हो, बीमारी परिवार को आर्थिक संकट में न धकेल दे और नागरिक को अपनी ही व्यवस्था के सामने स्वयं को छोटा महसूस न करना पड़े।

युवा इंटरजार में, भारत किस रफ़्तार में?



विकास
की असली
कसौटी

भारत बड़ा बन रहा है, लेकिन क्या भारत बेहतर भी बन रहा है? यही प्रश्न हमारी विकास यात्रा की सबसे महत्वपूर्ण कसौटी होना चाहिए।

भारत की सबसे बड़ी शक्ति उसकी युवा आबादी है। लेकिन युवा शक्ति तभी राष्ट्रीय शक्ति बनती है, जब उसके सामने अवसरों के दरवाजे खुले हों। आज का युवा महत्वाकांक्षी है। वह दुनिया को देखता है और अपने लिए बेहतर भविष्य की कल्पना करता है। लेकिन उसके सामने सबसे बड़ा प्रश्न है—क्या उसके सपनों के अनुपात में अवसर उपलब्ध

हैं? रोजगार केवल वेतन का प्रश्न नहीं है। यह सम्मान, आत्मनिर्भरता और भविष्य पर विश्वास का प्रश्न है। एक युवा वर्षों तक परीक्षा की तैयारी करता है तो वह केवल नौकरी नहीं खोज रहा होता; वह अपने जीवन की दिशा खोज रहा होता है। इसलिए जब अवसर सीमित हों या व्यवस्था की निष्पक्षता पर प्रश्न उठें, तब निराशा केवल व्यक्तिगत नहीं रहती।

हमें युवाओं से यह कहने के बजाय कि भारत का भविष्य उज्ज्वल है, ऐसा भारत बनाना होगा जिसमें उन्हें अपने वर्तमान में ही भविष्य दिखाई दे।





■ GDP बढ़ी, क्या जिंदगी भी बेहतर हुई?

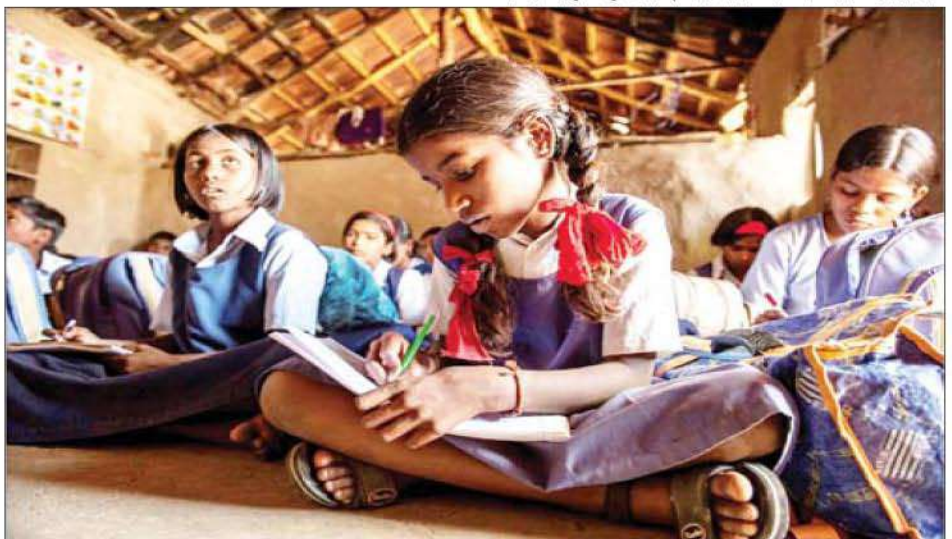
आर्थिक विकास आवश्यक है, लेकिन बड़ी अर्थव्यवस्था अपने आप बेहतर समाज की गारंटी नहीं होती। आम नागरिक अर्थव्यवस्था को अपने महीने के बजट से समझता है। उसकी चिंता है—आय, बच्चों की पढ़ाई, घर का खर्च और बीमारी की स्थिति में परिवार की सुरक्षा। यदि विकास के आंकड़े बढ़ रहे हों लेकिन नागरिक की आर्थिक असुरक्षा बनी रहे, तो हमें विकास और जीवन के बीच की दूरी को समझना होगा।

हम अक्सर सुनते हैं कि अर्थव्यवस्था बढ़ रही है, निवेश आ रहा है और रोजगार के नए अवसर पैदा हो रहे हैं। ये बातें महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि किसी भी देश का भविष्य उसकी आर्थिक शक्ति से जुड़ा होता है। लेकिन इन बड़ी सुखियों के बीच एक छोटा, मगर अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न अक्सर छूट जाता है— **क्या देश की आर्थिक प्रगति व्यक्ति की आर्थिक जिंदगी को भी बेहतर बना रही है?**

यही शायद आज के भारत की सबसे महत्वपूर्ण आर्थिक कसौटी है किसी देश की अर्थव्यवस्था का बढ़ा होना आवश्यक है, लेकिन पर्याप्त नहीं। निवेश के आंकड़े प्रभावशाली हो सकते हैं, शेयर बाजार नई ऊंचाइयों को छू सकता है और उद्योगों का विस्तार हो सकता है; लेकिन यदि एक

सामान्य परिवार लगातार बढ़ते खर्च, रोजगार की अनिश्चितता और भविष्य की आर्थिक चिंता से जूझ रहा है, तो हमें विकास की तस्वीर को और करीब से देखना होगा। आम नागरिक अर्थव्यवस्था को सकल घरेलू उत्पाद के आंकड़ों से नहीं मापता। वह इसे अपने मासिक बजट से मापता है। इसके लिए अर्थव्यवस्था का प्रश्न है—

क्या मेरी आय बढ़ रही है? क्या मेरी नौकरी सुरक्षित है? क्या बच्चों की पढ़ाई का खर्च संभाल सकूंगा? क्या बीमारी आने पर मेरी बचत समाप्त हो जाएगी? और क्या मैं अपने भविष्य के लिए कुछ बचा और निवेश कर पा रहा हूँ? देश की अर्थव्यवस्था और व्यक्ति की अर्थव्यवस्था के बीच यही संबंध जितना मजबूत होगा, विकास उतना ही सार्थक होगा।



विकास की असली सफलता तब है, जब आर्थिक वृद्धि नागरिक के जीवन में सुरक्षा और संभावना में बदलती है।

■ रोजगार केवल नौकरी नहीं, आर्थिक आत्मविश्वास है

आज रोजगार का अर्थ भी बदल रहा है। केवल एक स्थायी नौकरी को जीवन की आर्थिक सुरक्षा का एकमात्र आधार मानना पर्याप्त नहीं है। तकनीक, ऑटोमेशन और बदलती अर्थव्यवस्था के दौर में व्यक्ति को लगातार अपनी क्षमता में निवेश करना होगा। रोजगार का प्रश्न केवल बेरोजगारी के आंकड़ों से नहीं समझा जा सकता। रोजगार व्यक्ति को आय देता है, लेकिन उससे अधिक महत्वपूर्ण है कि वह उसे आत्मविश्वास देता है। एक नियमित आय व्यक्ति को भविष्य की योजना बनाने की क्षमता देती है। वह बच्चों की शिक्षा के बारे में सोच सकता है, घर खरीदने की योजना बना सकता है और अपने बुढ़ापे के लिए बचत कर सकता है। इसके विपरीत आय की अनिश्चितता पूरे आर्थिक जीवन को प्रभावित करती है।

देश की अर्थव्यवस्था तभी सचमुच मजबूत होती है, जब नागरिक की आर्थिक जिंदगी भी मजबूत हो।

■ स्कूल की बेंच से तय होगा भारत का भविष्य

हम कैसा भारत बना रहे हैं, इसका उत्तर हमारे स्कूलों और विश्वविद्यालयों में भी छिपा है। क्या एक साधारण परिवार का प्रतिभाशाली बच्चा अपनी मेहनत के बल पर आगे बढ़ सकता है? क्या शिक्षा केवल डिग्री दे रही है या अवसर तक पहुंचने का रास्ता भी बना रही है? यदि किसी बच्चे की प्रतिभा



अर्थ है, कानून सबके लिए समान है, परीक्षा निष्पक्ष है और शिकायत सुनी जाएगी। जब यह विश्वास कमजोर होता है तो संस्थाएं बनी रहती हैं, लेकिन उनके भीतर की नैतिक शक्ति कम होने लगती है। भारत को केवल आर्थिक और तकनीकी रूप से आधुनिक नहीं बनना है। उसे संस्थागत रूप से विश्वसनीय और सामाजिक रूप से मानवीय भी बनना है।

अंततः भारतीय जनता बहुत असाधारण मांग नहीं कर रही। वह रोजगार चाहती है, लेकिन केवल आंकड़ों में नहीं—वास्तविक अवसरों के रूप में। वह विकास चाहती है, लेकिन उसका अनुभव अपने जीवन में करना चाहती है। वह अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा,

निष्पक्ष व्यवस्था और सम्मानजनक जीवन चाहती है। और शायद सबसे बढ़कर, वह यह चाहती है कि उसका भविष्य केवल भाषणों में नहीं, उसके जीवन में दिखाई दे।

हम कैसा भारत बना रहे हैं—इसका उत्तर हमारी इमारतों से कम और हमारे नागरिकों के जीवन से अधिक मिलेगा।

यदि एक युवा को अपनी मेहनत पर विश्वास है, एक बच्चा अपनी परिस्थितियों से आगे बढ़ सकता है, एक बीमार व्यक्ति इलाज के भय से आर्थिक रूप से नहीं टूटता और एक नागरिक व्यवस्था के सामने सम्मानित महसूस करता है—तभी हम कह सकेंगे कि हम केवल एक बड़ा भारत नहीं, बल्कि एक बेहतर भारत बना रहे हैं।

भारत बड़ा बन रहा है। लेकिन क्या भारत बेहतर भी बन रहा है?

उसकी आर्थिक पृष्ठभूमि से हार जाती है, तो हम अवसरों का लोकतंत्र नहीं बना पा रहे। भारत का भविष्य केवल इस बात से तय नहीं होगा कि हमारे पास कितने विश्वविद्यालय हैं, बल्कि इससे होगा कि वहां से निकलने वाला युवा अपने भविष्य को लेकर कितना सक्षम और आश्वस्त है।

■ बीमारी आए तो विकास कहाँ खड़ा है?

स्वास्थ्य किसी भी समाज की मानवीयता की सबसे कठिन परीक्षा है। बीमारी किसी की आर्थिक स्थिति देखकर नहीं आती, लेकिन इलाज का बोझ अक्सर परिवार की आर्थिक क्षमता पर निर्भर करता है। एक परिवार वर्षों की मेहनत से बचत करता है और एक गंभीर बीमारी उसका आर्थिक संतुलन बिगाड़ सकती है। इसलिए विकसित भारत केवल अत्याधुनिक अस्पतालों वाला भारत नहीं हो सकता। विकसित भारत वह होगा जिसमें सामान्य नागरिक को समय पर और सम्मानजनक उपचार मिल सके। नागरिक को यह विश्वास होना चाहिए कि बीमारी आने पर वह अकेला नहीं है।

■ मजबूत सरकार, लेकिन नागरिक कितना मजबूत?

सरकार की असली तस्वीर किसी बड़े मंच पर नहीं, बल्कि नागरिक के रोजमर्रा के अनुभव में दिखाई देती है—सरकारी कार्यालय में, अस्पताल की कतार में, पुलिस

थाने में, स्कूल में और नगर निगम के काउंटर पर। नागरिक अपने अधिकार के लिए कितना संघर्ष करता है और उसे कितना सम्मान मिलता है—यही शासन की वास्तविक परीक्षा है। हम अक्सर मजबूत सरकार की बात करते हैं। लेकिन सरकार की असली शक्ति इस बात से तय नहीं होती कि वह नागरिक पर कितना प्रभाव डाल सकती है। उसकी असली शक्ति इस बात से तय होती है कि एक साधारण नागरिक उसके सामने कितना निर्भय और सम्मानित महसूस करता है।

सरकार बड़ी हो सकती है, लेकिन नागरिक को छोटा महसूस नहीं होना चाहिए।

■ बड़ा भारत किसके लिए?

किसी राष्ट्र की सबसे बड़ी पूंजी नागरिक का विश्वास होता है—विश्वास कि मेहनत का



विकास की नई कसौटी



बदलता छत्तीसगढ़

छत्तीसगढ़ का भविष्य केवल उसकी संभावनाओं से नहीं बनेगा, उसे आकार देने वाली सरकार की दूरदृष्टि, प्राथमिकताओं और निरंतर विकास-प्रयासों से भी तय होगा।

किसी राज्य के बदलने की कहानी हमेशा बड़े आंकड़ों से शुरू नहीं होती। कई बार वह एक नई सड़क से शुरू होती है, जो किसी दूरस्थ गांव को शहर से जोड़ देती है। कभी किसी घर तक पहुंचे पानी से, कभी बेहतर स्वास्थ्य सुविधा से और कभी किसी युवा को अपने ही राज्य में दिखाई देने वाले नए अवसर से।

छत्तीसगढ़ आज ऐसे ही बदलाव के दौर से गुजर रहा है। राज्य में बुनियादी ढांचे का विस्तार, दूरस्थ क्षेत्रों तक बढ़ती पहुंच, निवेश और औद्योगिक गतिविधियों की नई संभावनाएं, जल संरक्षण और नागरिक सुविधाओं को बेहतर बनाने के प्रयास एक साथ दिखाई देते हैं। इन्हें अलग-अलग उपलब्धियों की सूची की तरह देखने के बजाय एक व्यापक परिवर्तन की प्रक्रिया के रूप में देखना चाहिए।

छत्तीसगढ़ में विकास अब केवल निर्माण

का विषय नहीं, पहुंच और संभावनाओं का विस्तार भी बन रहा है।

दूरियों को कम करता विकास

छत्तीसगढ़ की भौगोलिक संरचना ने विकास के सामने हमेशा विशेष चुनौतियां रखी हैं। दूरस्थ वनांचल, आदिवासी क्षेत्र और बिखरी हुई बस्तियों तक सुविधाएं पहुंचाना किसी भी सरकार के लिए आसान नहीं है। ऐसे क्षेत्रों में सड़क केवल सड़क नहीं होती। वह स्कूल तक पहुंच है, अस्पताल तक समय पर पहुंचने की संभावना है और किसान के लिए बाजार तक पहुंच का रास्ता है। इसी तरह बिजली, पेयजल और डिजिटल संपर्क केवल सुविधाएं नहीं हैं। वे जीवन की संभावनाओं को बढ़ाते हैं। दूरस्थ और जनजातीय क्षेत्रों तक बुनियादी सुविधाओं की पहुंच बढ़ाने पर दिया जा रहा जोर इसी व्यापक विकास-दृष्टि का

विकास का अर्थ केवल निर्माण नहीं, सुविधाओं और अवसरों की दूरी कम करना भी है।

छत्तीसगढ़ प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध है। खनिज, ऊर्जा, कृषि और वन संपदा राज्य की आर्थिक शक्ति के प्रमुख आधार हैं। लेकिन संसाधनों की वास्तविक शक्ति तभी सामने आती है, जब वे नए अवसरों में बदलें। निवेश और औद्योगिक गतिविधियों को गति देने के प्रयास इसलिए महत्वपूर्ण हैं कि इनके साथ तकनीक, कौशल और रोजगार की नई संभावनाएं जुड़ती हैं।

निवेश का सबसे बड़ा अर्थ तब बनता है, जब वह किसी युवा के भविष्य में अवसर बन जाए।

निवेश की सफलता केवल बड़ी राशि में नहीं मापी जानी चाहिए। उसका सबसे अच्छा परिणाम तब दिखाई देता है, जब स्थानीय युवाओं के लिए नए अवसर बनें, छोटे व्यवसायों को गति मिले और राज्य के भीतर अधिक मूल्य निर्माण हो।

छत्तीसगढ़ की विकास यात्रा में जल संरक्षण का महत्व लगातार बढ़ रहा है। कृषि, ग्रामीण जीवन और भविष्य की आर्थिक जरूरतों के लिए पानी केवल प्राकृतिक संसाधन नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा का आधार है। तालाबों का संरक्षण, वर्षा जल संचयन और भूजल को पुनर्जीवित करने के प्रयास भविष्य की तैयारी हैं। आज बचाया गया पानी आने वाले वर्षों में खेती,

गांव और परिवारों की स्थिरता का आधार बन सकता है।

विकास वह नहीं जो केवल आज को बेहतर बनाए; विकास वह है जो भविष्य को भी सुरक्षित करे।

किसी भी सरकारी योजना की सफलता तब पूरी होती है, जब नागरिक उसका लाभ अपने जीवन में महसूस करे। सरकारी सेवाओं तक सरल पहुंच, तकनीक के माध्यम से सुविधा, समय की बचत और योजनाओं का पारदर्शी लाभ—यही सुशासन की वास्तविक पहचान है। सरकार की शक्ति केवल बड़े निर्णयों में नहीं दिखाई देती। उसका वास्तविक प्रभाव तब दिखाई देता है, जब सामान्य नागरिक का काम कम समय और कम परेशानी में पूरा हो।

सुशासन तब सफल होता है, जब नागरिक को व्यवस्था से संघर्ष नहीं, सहयोग का अनुभव हो।

छत्तीसगढ़ की वर्तमान विकास यात्रा का सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि सरकार की प्राथमिकताओं में बुनियादी ढांचे, निवेश, दूरस्थ क्षेत्रों तक पहुंच और नागरिक सुविधाओं का विस्तार एक

दूसरे से जुड़ते दिखाई देते हैं। सरकार के सामने चुनौती केवल नई परियोजनाओं की घोषणा करने की नहीं, बल्कि विकास की इस गति को स्थायी बनाते हुए उसके लाभ को राज्य के व्यापक समाज तक पहुंचाने की है। वर्तमान प्रयास यह संकेत देते हैं कि विकास को केवल शहरों और आंकड़ों तक सीमित रखने के बजाय उसे गांवों, दूरस्थ अंचलों, युवाओं, किसानों और सामान्य नागरिक तक पहुंचाने पर जोर दिया जा रहा है।

सरकार को सफलता केवल इस बात से नहीं मापी जाएगी कि उसने कितनी परियोजनाएं शुरू कीं, बल्कि इससे भी कि उसकी नीतियों ने छत्तीसगढ़ के नागरिकों के भविष्य में कितना विश्वास पैदा किया।

सरकार की उपलब्धियों का वास्तविक अर्थ आने वाले वर्षों में और स्पष्ट होगा—जब नई सड़कें केवल परियोजनाएं नहीं, गांवों की स्थायी सुविधा बनेंगी; निवेश केवल आंकड़ा नहीं, युवाओं के लिए अवसर बनेगा; और प्रशासनिक सुधार केवल व्यवस्था का बदलाव नहीं, नागरिक के जीवन की सहजता बनेंगे। यही किसी सरकार की विकास-दृष्टि की सबसे बड़ी परीक्षा भी है।

यदि वर्तमान सरकार इसी दिशा, गति और प्राथमिकताओं के साथ विकास की प्रक्रिया को आगे बढ़ाती रही, तो छत्तीसगढ़ की पहचान केवल संसाधनों से समृद्ध राज्य की नहीं रहेगी। वह एक ऐसे राज्य के रूप में भी उभर सकता है, जहां सरकार की नीति, विकास की गति और नागरिक की आकांक्षाएं एक साझा दिशा में आगे बढ़ रही हों।

छत्तीसगढ़ का भविष्य केवल उसकी संभावनाओं से नहीं बनेगा, उसे आकार देने वाली सरकार की दूरदृष्टि, प्राथमिकताओं और निरंतर विकास-प्रयासों से भी तय होगा।

Chhattisgarh
Income Certificate 2026

Sewa Setu Portal

Apply Online Track Status Download Certificate

B-1 फॉर्म
कमा / कृषि
प्रमाण पत्र
(यूआर एनएफटी)
आय प्रमाण पत्र

Income Certificate
Apply Online

Application Approved

राजस्व अधिकारी

Atleast Mandatory Pashu / Sargash / Panshad Certificate B-1 Form for Agricultural Income 7 Working Days Timeline

स्क्रीन से नशे तक

स्क्रीन और नशे की इस पूरी चर्चा के केंद्र में अंततः एक ही प्रश्न है—हमारे बच्चों और युवाओं के जीवन में वास्तविक संबंधों की जगह कितनी बची है? तकनीक अब जीवन की अपरिहार्य वास्तविकता है, इसलिए प्रश्न यह नहीं कि बच्चे के हाथ में मोबाइल है या नहीं, बल्कि यह है कि मोबाइल के बाहर उसके पास क्या है—क्या उसके पास खेलने की जगह है, भरोसेमंद मित्र हैं, अपने मन की बात कहने का अवसर है और कोई ऐसा वयस्क है, जिस पर वह बिना डर भरोसा कर सके?

सीमाओं के पार फैलता एक संकट

डॉ. नरेन्द्र पाण्डेय

हमारे बच्चे पहले से अधिक जुड़े हुए हैं, फिर भी कई बार पहले से अधिक अकेले हैं।

शिक्षक दिवस केवल शिक्षकों के सम्मान का अवसर नहीं है। यह उस पीढ़ी के भविष्य पर विचार करने का भी अवसर है, जिसे शिक्षक आकार दे रहे हैं। शिक्षक दिवस के अवसर पर शिक्षकों से संवाद करते हुए प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने दो ऐसी चुनौतियों की ओर ध्यान दिलाया, जो आज लगभग हर परिवार और शिक्षण संस्थान के सामने उपस्थित हैं—बच्चों और युवाओं का बढ़ता स्क्रीन टाइम और नशे की समस्या।

पहली नजर में ये दोनों विषय अलग-अलग दिखाई देते हैं। एक डिजिटल जीवनशैली से जुड़ा है और दूसरा स्वास्थ्य, अपराध तथा सामाजिक संकट से। इनके बीच सीधा कारण-परिणाम संबंध स्थापित करना न तो उचित होगा और न ही वैज्ञानिक। लेकिन यह प्रश्न अवश्य महत्वपूर्ण है कि क्या अत्यधिक डिजिटल निर्भरता, वास्तविक संवाद में कमी, अकेलापन और त्वरित संतुष्टि की आदत युवाओं को विभिन्न प्रकार के जोखिमों के प्रति अधिक संवेदनशील बना रही है?

यह प्रश्न केवल मोबाइल फोन का नहीं है। यह बदलते हुए युवा जीवन का प्रश्न है।

आज का बच्चा सूचना की दृष्टि से शायद इतिहास की सबसे संपन्न पीढ़ी का हिस्सा है। उसके हाथ में मोबाइल है और मोबाइल के माध्यम से दुनिया उसकी पहुंच में है। ज्ञान, मनोरंजन, संवाद और अवसर—सब कुछ कुछ क्लिक की दूरी पर है। तकनीक ने उसके सामने अनगिनत संभावनाओं के द्वार खोले हैं। लेकिन इसी सुविधा के साथ एक विरोधाभास भी दिखाई



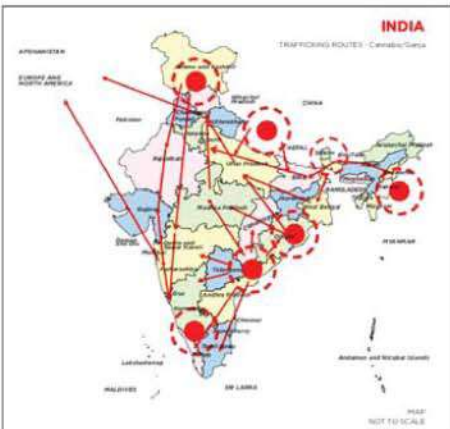


देता है। हमारे बच्चे पहले से अधिक जुड़े हुए हैं, फिर भी कई बार पहले से अधिक अकेले हैं।

डिजिटल मित्रों की संख्या बढ़ सकती है, लेकिन मन की बात कहने वाला व्यक्ति कम हो सकता है। परिवार एक ही घर में रह सकता है, लेकिन हर सदस्य अपनी अलग स्क्रीन की दुनिया में व्यस्त हो सकता है। मनुष्य को केवल सूचना नहीं चाहिए। उसे संबंध चाहिए, संवाद चाहिए और सुने जाने का अनुभव भी चाहिए।

जब वास्तविक संवाद कम होता है तो भीतर बनने वाले खालीपन को हर व्यक्ति अलग-अलग तरीके से भरता है। कोई खेल में, कोई रचनात्मकता में, कोई मित्रता में और कोई स्वयं को डिजिटल दुनिया में और गहराई तक डुबो देता है। हर अकेलापन नशे तक नहीं ले जाता, लेकिन युवा मन के भीतर बनने वाले खाली स्थानों को यदि परिवार, मित्रता, खेल और रचनात्मकता नहीं भरेंगे तो बाजार और अपराध की दुनिया अपने-अपने तरीके से उन्हें भरने का प्रयास अवश्य करेगी।

■ नशे का बदलता भूगोल



तकनीक ने जीवन को आसान बनाया है, लेकिन इसके साथ एक नई आदत भी विकसित हुई है—तत्काल संतुष्टि की आदत। मनोरंजन चाहिए तो स्क्रीन खोलिए। बोरियत है तो नया कंटेंट उपलब्ध है। बातचीत करनी है तो संदेश भेज दीजिए। मन बेचैन है तो स्वयं को किसी डिजिटल सामग्री में व्यस्त कर लीजिए। समस्या सुविधा की नहीं है। समस्या तब शुरू होती है, जब व्यक्ति हर असुविधा और हर बेचैनी से तुरंत बच निकलना चाहता है। जीवन में प्रतीक्षा, असफलता और बोरियत भी अनुभव हैं। इन्हीं से धैर्य और आत्मनियंत्रण विकसित होता है।

नशे की दुनिया भी व्यक्ति को इसी कमजोरी के क्षण में एक आसान विकल्प का भ्रम देती है—क्षणिक राहत, क्षणिक आनंद और वास्तविकता से अस्थायी दूरी। लेकिन उस क्षणिक अनुभव की कीमत कई बार बहुत लंबी होती है। इसीलिए नशे को केवल नैतिक कमजोरी कहकर समझना एक गंभीर भूल है। उसके पीछे जिज्ञासा हो सकती है, मित्रों का दबाव हो सकता है, तनाव हो सकता है, अकेलापन हो सकता है और कभी-कभी जीवन की किसी कठिन परिस्थिति से बच निकलने की इच्छा भी हो सकती है।

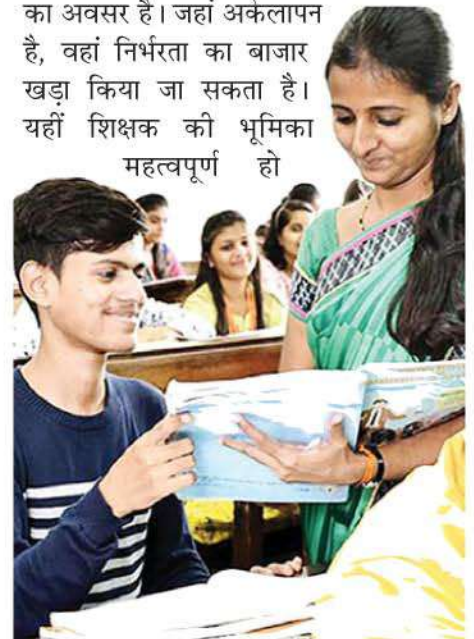
लंबे समय तक नशे को सीमावर्ती राज्यों या अपराध जगत की समस्या के रूप में देखा गया। आज उसका भूगोल बदल चुका है। यह किसी एक शहर, किसी एक वर्ग या किसी विशेष परिवार की समस्या नहीं रह गई है। सबसे खतरनाक भ्रम शायद यही है कि—‘हमारे घर में ऐसा नहीं हो सकता।’ नशे की शुरुआत हमेशा किसी आपराधिक इरादे से नहीं होती। कई बार पहला कदम जिज्ञासा

होता है। कभी किसी मित्र समूह का दबाव, कभी तनाव और कभी केवल उस अनुभव को आजमाने की इच्छा। पहला कदम अक्सर मामूली दिखाई देता है और यही उसकी सबसे खतरनाक विशेषता है।

समाज युवा को भविष्य के रूप में देखता है, लेकिन संगठित अपराध उसे संभावित बाजार के रूप में भी देख सकता है।

नशीले पदार्थों का कारोबार सीमाओं से बहुत आगे निकल चुका है। अपराध की दुनिया के लिए राष्ट्रीय सीमाएं ऐसी बाधाएं हैं, जिन्हें पार करने के नए रास्ते खोज लिए जाते हैं। भारत की भौगोलिक स्थिति भी इस चुनौती को जटिल बनाती है। पश्चिम और पूर्व के प्रमुख मादक पदार्थ क्षेत्रों के बीच स्थित होने के कारण भारत को सीमापार तस्करी नेटवर्कों की चुनौती का सामना करना पड़ता है लेकिन आज तस्करी केवल सीमाओं और रास्तों की कहानी नहीं है। नेटवर्क बदल गए हैं। संचार के तरीके बदल गए हैं। भुगतान और वितरण के तरीके बदल रहे हैं। इसलिए केवल नशीले पदार्थों की खेप पकड़ लेना पूरी सफलता नहीं है। वास्तविक चुनौती उस पूरी श्रृंखला को समझने और तोड़ने की है, जिसके माध्यम से यह अवैध कारोबार उत्पादन से लेकर उपभोक्ता तक पहुंचता है।

समाज युवा को भविष्य के रूप में देखता है। परिवार उसे अपनी आशा मानता है और शिक्षक उसकी संभावनाओं को पहचानता है। लेकिन संगठित अपराध की दृष्टि अलग है। उसके लिए युवा एक संभावित बाजार भी हो सकता है। जहां जिज्ञासा है, वहां प्रयोग की संभावना है। जहां तनाव है, वहां राहत बेचने का अवसर है। जहां अकेलापन है, वहां निर्भरता का बाजार खड़ा किया जा सकता है। यहीं शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण हो





जाती है। शिक्षक का काम पुलिस या चिकित्सक बनना नहीं है। लेकिन वह बच्चे के जीवन में आने वाले परिवर्तनों को पहचानने वालों में सबसे पहले हो सकता है। कोई विद्यार्थी अचानक पढ़ाई से दूर होने लगे, मित्रों से कटने लगे, उसका व्यवहार बदल जाए या वह असामान्य रूप से उदास अथवा आक्रामक दिखाई दे—तो हर परिवर्तन को नशे से जोड़ना गलत होगा, लेकिन उसे पूरी तरह नजरअंदाज करना भी उचित नहीं।

कई बार अनुशासनहीनता के पीछे तनाव होता है। कई बार आक्रोश के पीछे डर और चुप्पी के पीछे सहायता की आवश्यकता। शिक्षा संस्थानों को केवल अंक और उपलब्धियां मापने वाली जगह नहीं रहना चाहिए। उन्हें बच्चों की बदलती दुनिया को समझने की क्षमता भी विकसित करनी होगी।

■ अंततः सवाल संबंध का है

नशे के खिलाफ सबसे महत्वपूर्ण सुरक्षा दीवार परिवार हो सकता है, यदि परिवार संवाद की जगह बने। हम बच्चों से उनके अंक पूछते हैं, उनकी दिनचर्या पूछते हैं, मित्रों और मोबाइल के बारे में पूछते हैं। लेकिन कई बार उनके मन के बारे में पूछना भूल जाते हैं।

‘तुम ठीक हो? क्या कोई ऐसी बात है, जिसे तुम मुझसे कहना चाहते हो?’

ये प्रश्न साधारण लगते हैं, लेकिन कई बार संवाद का एक ऐसा द्वार खोल सकते हैं, जो किसी गंभीर समस्या को समय रहते सामने ला दे। बच्चे को यह भरोसा होना चाहिए कि समस्या आने पर उसके पास लौटने की जगह है। यदि घर केवल दंड का स्थान बन जाएगा तो बच्चा समस्या छिपाना सीख सकता है। विश्वास का अर्थ नियंत्रण समाप्त करना नहीं है। विश्वास का अर्थ है—अनुशासन के साथ अपनापन और निगरानी के साथ संवाद।

आज माता-पिता के सामने चुनौती यह भी है कि बच्चे का संसार पहले की तुलना में अधिक अदृश्य हो गया है। पहले हमें उसके मित्र दिखाई देते थे। आज उसके अनेक संबंध स्क्रीन के भीतर हो सकते हैं। बच्चा घर में बैठा है, फिर भी हम हमेशा नहीं जानते कि वह किस दुनिया में है। इसका समाधान तकनीक से भयभीत होना नहीं है। तकनीक आधुनिक जीवन की वास्तविकता है। समाधान है डिजिटल अनुशासन और सक्रिय संवाद। स्क्रीन टाइम कम करने का अर्थ केवल मोबाइल छीन लेना नहीं है। बच्चे के सामने स्क्रीन के बाहर भी एक अर्थपूर्ण जीवन होना चाहिए। खेल का मैदान, संगीत, पुस्तकें, नाटक, विज्ञान, मित्रता और रचनात्मक गतिविधियां केवल अतिरिक्त शौक नहीं हैं। ये बच्चे को वास्तविक जीवन से जोड़ने के माध्यम हैं। खेल उसे हार और जीत दोनों स्वीकार करना सिखाता है। रचनात्मकता भावनाओं को अभिव्यक्ति देती है। मित्रता सामाजिक सहारा देती है। परिवार सुरक्षा की अनुभूति देता है।

नशीले पदार्थों के अवैध कारोबार के प्रति कठोर कार्रवाई आवश्यक है। जो लोग जानबूझकर युवाओं को नशे के बाजार में धकेलते हैं, वे केवल सामाजिक समस्या का हिस्सा नहीं हैं। वे संगठित अपराध का हिस्सा हैं लेकिन नशे की गिरफ्त में आ चुका व्यक्ति केवल दंड का विषय नहीं है। उसे उपचार, परामर्श और पुनर्वास की आवश्यकता हो सकती है। उसे समाज में सम्मानपूर्वक लौटने का अवसर भी चाहिए।

स्क्रीन और नशे की इस पूरी चर्चा के केंद्र में

अंततः एक ही प्रश्न है—हमारे बच्चों और युवाओं के जीवन में वास्तविक संबंधों की जगह कितनी बची है? तकनीक अब जीवन की अपरिहार्य वास्तविकता है, इसलिए प्रश्न यह नहीं कि बच्चे के हाथ में मोबाइल है या नहीं, बल्कि यह है कि मोबाइल के बाहर उसके पास क्या है—क्या उसके पास खेलने की जगह है, भरोसेमंद मित्र हैं, अपने मन की बात कहने का अवसर है और कोई ऐसा वयस्क है, जिस पर वह बिना डर भरोसा कर सके?

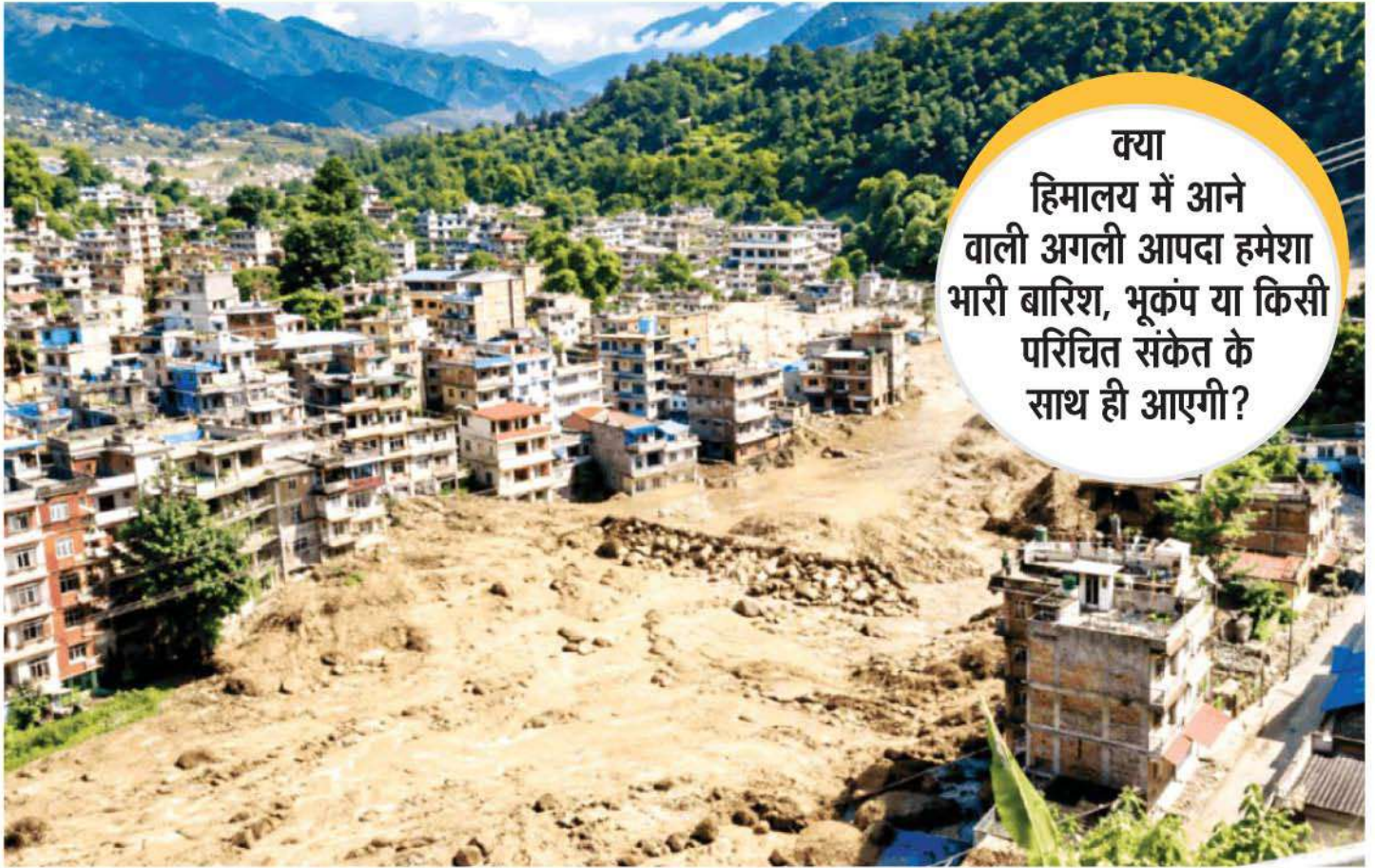
■ सीमापार तस्करी की कहानी

उस बदलते समय की चेतावनी है जिसमें अपराध, तकनीक और बाजार तेजी से नई राहें बना रहे हैं। इसका मुकाबला केवल कानून या पुलिस कार्रवाई से नहीं होगा। परिवार को संवाद करना होगा, शिक्षकों को व्यवहार में आने वाले परिवर्तनों के प्रति सजग रहना होगा, समाज को नशे की गिरफ्त में आए व्यक्ति के प्रति संवेदनशील होना होगा और कानून को उन संगठित नेटवर्कों के प्रति कठोर, जो युवाओं को अपने कारोबार का बाजार बनाते हैं। नशे के खिलाफ सबसे प्रभावी लड़ाई शायद किसी सीमा चौकी से नहीं, घर की एक ईमानदार बातचीत, कक्षा में शिक्षक की सजग नजर और उस क्षण से शुरू होगी, जब हम अपने बच्चे के पास बैठकर सचमुच पूछ सकें—‘तुम ठीक हो न? क्योंकि जब परिवार और समाज अपने बच्चों को सुनना कम कर देते हैं, तब उनके आसपास बहुत-सी दूसरी आवाजें उन्हें सुनने और अपनी दिशा में ले जाने के लिए तैयार खड़ी होती हैं।’

‘तुम ठीक हो न?’

नशे की कोई सीमा नहीं होती; इसलिए हमारी सजगता, संवाद और प्रतिरोध की भी कोई सीमा नहीं होनी चाहिए।





क्या
हिमालय में आने
वाली अगली आपदा हमेशा
भारी बारिश, भूकंप या किसी
परिचित संकेत के
साथ ही आएगी?

नेपाल की आपदा और भारत के सामने अगला खतरा

हिमालय की सुरक्षा केवल पर्वतीय राज्यों का विषय नहीं है। यह भारत की जल, ऊर्जा, कृषि, बुनियादी ढांचे और मानवीय सुरक्षा का प्रश्न है। नेपाल की त्रासदी के बाद सिक्किम में भी जोखिम वाले हिमनद झीलों पर चिंता बढ़ी है।

नेपाल में आई हालिया हिमालयी आपदा केवल एक पड़ोसी देश की त्रासदी नहीं है। यह भारत के लिए भी एक चेतावनी है। हिमालय की कोई राजनीतिक सीमा नहीं होती। बर्फ, ग्लेशियर, पहाड़, नदियां और मौसम पासपोर्ट लेकर सीमाएं पार नहीं करते। नेपाल में पहाड़ का टूटना, नदी का उफान और बर्फ का अस्थिर होना उस पूरे हिमालयी भूगोल के लिए खतरे की घंटी है, जिसके दूसरे छोर पर भारत के करोड़ों लोग रहते हैं। इसीलिए केवल यह नहीं है कि नेपाल में क्या हुआ। इसीलिए यह है—क्या भारत अगली ऐसी आपदा के लिए तैयार है?

26 अगस्त को नेपाल-तिब्बत सीमा के निकट हिमालय के ऊंचे हिस्से में बर्फ और चट्टान का एक विशाल हिस्सा टूटकर नीचे गिरा। इसके बाद पानी, बर्फ, मिट्टी और चट्टानों का विनाशकारी प्रवाह घाटियों में दौड़ पड़ा।

गांव, सड़कें, पुल और जलविद्युत परियोजनाएं इसकी चपेट में आ गईं। यह कोई सामान्य बाढ़ नहीं थी। यह उस हिमालय की अस्थिरता का भयावह प्रदर्शन था, जिसे हम लंबे समय से स्थिर और शाश्वत मानते आए हैं।

नेपाल की त्रासदी का सबसे भयावह पक्ष यह है कि लोगों को प्रतिक्रिया देने का बहुत कम समय मिला। इसने एक नया प्रश्न खड़ा किया है—क्या हिमालय में आने वाली अगली आपदा हमेशा भारी बारिश, भूकंप या किसी परिचित संकेत के साथ ही आएगी? शायद नहीं।

❖ खतरा सिर्फ बारिश का नहीं

हम लंबे समय तक पहाड़ी आपदाओं को मानसून, बादल फटने या भूस्खलन से जोड़कर देखते रहे हैं। लेकिन बदलता हिमालय एक अधिक जटिल खतरा सामने ला रहा है। बढ़ते

तापमान के साथ ग्लेशियरों का पिघलना तेज हो रहा है। बर्फ और चट्टानों की संरचना कमजोर हो सकती है। नई और पुरानी हिमनद झीलों में पानी का दबाव बढ़ सकता है। ऊंचाई पर होने वाली किसी घटना का असर कुछ ही मिनटों में नीचे की घाटियों तक पहुंच सकता है। नेपाल की आपदा ने यह भी दिखाया कि कभी-कभी खतरा केवल पानी से नहीं आता।

हिमालय दुनिया की सबसे युवा और भूगर्भीय रूप से सक्रिय पर्वत श्रृंखलाओं में से एक है। जलवायु परिवर्तन इस प्राकृतिक अस्थिरता के ऊपर एक नया दबाव पैदा कर रहा है। इसलिए भविष्य की आपदाओं को केवल पारंपरिक बाढ़ की दृष्टि से समझना अब पर्याप्त नहीं होगा। संयुक्त राष्ट्र के अधिकारियों ने भी हालिया नेपाल आपदा के बाद हिमालयी क्षेत्र में बढ़ते ग्लेशियल फ्लड जोखिम को गंभीर चेतावनी बताया है।

भारत कितना सुरक्षित है?

इस प्रश्न का ईमानदार उत्तर शायद यह है—भारत पूरी तरह सुरक्षित नहीं है।



भारत की उत्तरी सीमा के साथ फैला हिमालयी क्षेत्र केवल पहाड़ों का एक भूगोल नहीं है। यह लाखों लोगों का घर है और उत्तर भारत की नदियों तथा मैदानी जीवन से गहराई से जुड़ा है। लद्दाख से लेकर जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश तक हिमालयी क्षेत्र में बढ़ती जलवायु अस्थिरता अलग-अलग रूपों में खतरा पैदा कर सकती है। पहाड़ों में होने वाली घटनाओं का असर केवल पहाड़ी गांवों तक सीमित नहीं रहता। हिमालय से निकलने वाली नदियां मैदानों तक जाती हैं।

इसलिए हिमालय की सुरक्षा केवल पर्वतीय राज्यों का विषय नहीं है। यह भारत की जल, ऊर्जा, कृषि, बुनियादी ढांचे और मानवीय सुरक्षा का प्रश्न है। नेपाल की त्रासदी के बाद सिक्किम में भी जोखिम वाले हिमनद झीलों पर चिंता बढ़ी है। वहां दर्जनों

उच्च जोखिम वाली झीलों की पहचान और जोखिम कम करने की योजनाओं पर काम हो रहा है। यह बताता है कि खतरे अब सैद्धांतिक नहीं रह गए हैं।

पहाड़ों में विकास की नई परीक्षा



हिमालय में विकास आवश्यक है। सड़कें चाहिए। पुल चाहिए। जलविद्युत परियोजनाएं चाहिए। पर्यटन और सीमावर्ती क्षेत्रों के लिए बुनियादी ढांचा चाहिए। लेकिन नेपाल की आपदा ने एक कठिन प्रश्न फिर सामने रखा है—क्या हम उस हिमालय में निर्माण कर रहे हैं, जो अब वैसा नहीं रहा जैसा दशकों पहले था?

जलवायु परिवर्तन केवल मौसम नहीं बदल रहा। वह जोखिम का भूगोल भी बदल रहा है। ऐसी स्थिति में हर परियोजना को केवल आर्थिक लाभ से नहीं, बल्कि दीर्घकालिक सुरक्षा की कसौटी पर भी परखना होगा। किसी घाटी में जलविद्युत परियोजना बनाना महत्वपूर्ण हो सकता है, लेकिन यह भी देखना होगा कि उसके ऊपर की ढलानें कितनी स्थिर हैं। सड़क बनाना आवश्यक है, लेकिन यह समझना भी आवश्यक है कि बदलती वर्षा और भूस्खलन के पैटर्न उस सड़क को कितने समय तक सुरक्षित रखेंगे।

हिमालय में विकास का अर्थ अब केवल निर्माण नहीं, सुरक्षित निर्माण होना चाहिए।

चेतावनी पहले, राहत बाद में

नेपाल की आपदा से सबसे बड़ा सबक शायद यही है कि हिमालय में अब केवल आपदा के बाद राहत की तैयारी पर्याप्त नहीं है। हमें आपदा से पहले खतरे को पहचानने की क्षमता विकसित करनी होगी। उपग्रह निगरानी, ग्लेशियर और हिमनद झीलों का नियमित अध्ययन, ढलानों की निगरानी, मौसम और नदी प्रणालियों के आंकड़े तथा स्थानीय समुदायों तक त्वरित चेतावनी—ये अब वैज्ञानिक विलासिता नहीं, बल्कि जीवन की आवश्यकता हैं।

भारत के लिए सबसे बड़ी चुनौती केवल तकनीक खरीदना नहीं है। चुनौती यह है कि तकनीक से मिली चेतावनी गांव के अंतिम व्यक्ति तक समय पर पहुंचे। किसी वैज्ञानिक को उपग्रह पर खतरा दिखाई दे और घाटी में रहने वाले व्यक्ति को उसका पता कई घंटे बाद चले, तो विज्ञान और सुरक्षा के बीच की दूरी अभी भी बहुत बड़ी है।

भारत के लिए संदेश

नेपाल की आपदा हमें डराने के लिए नहीं, जगाने के लिए आई है। हिमालय को अब केवल सुंदरता, पर्यटन और धार्मिक आस्था के भूगोल के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है। वह तेजी से बदलते जलवायु जोखिम का भूगोल भी बन रहा है। भारत ने आपदा प्रबंधन, मौसम पूर्वानुमान और अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण क्षमता विकसित की है। अब आवश्यकता इन क्षमताओं को हिमालय की नई चुनौतियों के अनुरूप और अधिक एकीकृत करने की है।

हिमालयी सुरक्षा को केंद्र और राज्यों के बीच समन्वय, वैज्ञानिक संस्थानों की निरंतर निगरानी, स्थानीय प्रशासन की तैयारी और सीमापार सूचना-साझेदारी से जोड़ना होगा। क्योंकि पहाड़ की कोई राजनीतिक सीमा नहीं होती और न ही पानी किसी सीमा पर रुकता है। भारत, नेपाल और चीन के साझा हिमालयी भूगोल में डेटा और वैज्ञानिक सहयोग भविष्य की सुरक्षा का महत्वपूर्ण आधार बन सकता है। नेपाल की त्रासदी ने एक बात स्पष्ट कर दी है—जलवायु परिवर्तन भविष्य की चेतावनी नहीं रहा। वह वर्तमान का जोखिम बन चुका है।

भारत के सामने चुनौती यह नहीं कि अगली हिमालयी आपदा आएगी या नहीं। प्राकृतिक जोखिम को पूरी तरह समाप्त नहीं किया जा सकता। असली चुनौती यह है कि—

- जब वह आए, तब क्या हम पहले से जानते होंगे कि खतरा कहाँ है?
- क्या लोगों तक चेतावनी पहुंच चुकी होगी?
- क्या हमारी सड़कें, बांध, गांव और शहर बदलते हिमालय को ध्यान में रखकर तैयार किए गए होंगे?

यही प्रश्न आने वाले वर्षों में भारत की वास्तविक जलवायु सुरक्षा की कसौटी होगा।

नेपाल में टूटा पहाड़ केवल एक देश की त्रासदी नहीं है। वह पूरे हिमालय की ओर से एक संदेश है—पहाड़ बदल रहे हैं, अब हमें भी अपनी तैयारी बदलनी होगी।

विष्णु भैया सबके खेवईया

योजनाओं के आंकड़ों से आगे, बदलती जिंदगी की कहानियां

■ लाईफ वर्सिटी विशेष आलेख

छत्तीसगढ़ की राजनीति में सत्ता बदलने के साथ अक्सर नारों का रंग बदलता है। योजनाओं के नाम बदलते हैं, घोषणाएं बदलती हैं और प्राथमिकताएं भी बदलती दिखाई देती हैं। लेकिन किसी भी सरकार की असली पहचान उसके नारों से नहीं, उसके काम का असर आम आदमी की जिंदगी पर कितना पड़ा—इससे तय होती है। मुख्यमंत्री विष्णु देव साय की सरकार के सामने भी यही सबसे बड़ी कसौटी है।

एक ओर किसान है, जो अपनी फसल की बेहतर कीमत चाहता है। दूसरी ओर वह महिला है, जिसके लिए हर महीने मिलने वाली एक हजार रुपये की राशि घर के छोटे-बड़े खर्चों के बीच बड़ा सहारा बन जाती है। कहीं तेंदूपत्ता संग्राहक जंगल में अपनी मेहनत की कीमत बढ़ते देख रहा है, तो कहीं भूमिहीन मजदूर के खाते में सालाना सहायता की रकम पहुंच रही है। किसी परिवार के लिए पक्का मकान अब सपना नहीं रहा और किसी आदिवासी गांव में पहली बार बुनियादी सुविधाओं की उम्मीद आकार ले रही है। यही वे छोटी-बड़ी तस्वीरें हैं, जिनसे 'विष्णु भैया सबके खेवईया' जैसी राजनीतिक छवि बनती है।

■ महतारी वंदन - घर की चौखट पर आर्थिक संबल

छत्तीसगढ़ में महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण की सबसे चर्चित योजनाओं में महतारी वंदन योजना शामिल है। पात्र महिलाओं को प्रतिमाह एक हजार रुपये की सहायता सीधे उनके बैंक खाते में दी जा रही है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक



अगर किसान की आमदनी बढ़ती है, अगर महिला अपने पैरों पर खड़ी होती है, अगर मजदूर को आर्थिक सुरक्षा मिलती है, अगर वनवासी को अपनी मेहनत का बेहतर मूल्य मिलता है, अगर गरीब के सिर पर पक्की छत आती है, अगर आदिवासी गांव विकास की मुख्यधारा से जुड़ता है—तो फिर योजनाएं केवल सरकारी घोषणाएं नहीं रह जातीं। वे सुशासन का अनुभव बन जाती हैं। और शायद इसी अनुभव को छत्तीसगढ़ की सहज लोकभाषा में एक भावपूर्ण संबोधन मिलता है—'विष्णु भैया सबके खेवईया।'



लगभग 70 लाख महिलाएं इस योजना से लाभान्वित हो रही हैं। 22 क़िशतों में 14,306 करोड़ रुपये से अधिक की राशि सीधे खातों में पहुंचाई जा चुकी है लेकिन किसी योजना की सफलता केवल इस बात से नहीं मापी जा सकती कि सरकार ने कितने करोड़ रुपये बांटे। असली सवाल है—उस पैसे ने किसी परिवार की ज़िंदगी में क्या बदला?

गौरैला-पेंड्रा-मरवाही की हेमा सिंह इसका एक उदाहरण हैं। महतारी वंदन से मिली राशि को खर्च करने के बजाय उन्होंने उसे बचाया और उसी पूंजी से अपने घर के पास किराना दुकान शुरू कर दी एक हजार रुपये की मासिक सहायता उनके लिए सिर्फ सरकारी मदद नहीं रही—वह आत्मनिर्भरता की शुरुआती पूंजी बन गई यही किसी कल्याणकारी योजना की सबसे खूबसूरत परिणति है—सहायता से आत्मनिर्भरता तक का सफर।

❖ किसान के खेत से परिवार की उम्मीद तक



छत्तीसगढ़ को धान का कटोरा कहा जाता है। जाहिर है, यहां किसान की समृद्धि ही प्रदेश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था की मजबूती का आधार है। साय सरकार ने किसानों से 3,100 रुपये प्रति क्विंटल की दर से धान

❖ भूमिहीन के लिए भी सरकार का हाथ



किसान की बात करते समय अक्सर जमीन वाले किसान की चर्चा होती है। लेकिन खेत में काम करने वाला वह मजदूर, जिसके पास अपनी जमीन नहीं है, ग्रामीण अर्थव्यवस्था की उतनी ही महत्वपूर्ण कड़ी है। छत्तीसगढ़ सरकार की योजना के तहत 5.62 लाख भूमिहीन कृषि मजदूरों को प्रतिवर्ष 10 हजार रुपये की आर्थिक सहायता दी जा रही है। राशि बड़ी हो या छोटी—गरीब परिवार के लिए निश्चित आर्थिक सहायता का अपना महत्व होता है। बीमारी, बच्चों की पढ़ाई, घरेलू जरूरत या खेती के मौसम में बेरोजगारी—ऐसे समय में यही पैसा सहारा बनता है। कल्याणकारी राज्य की पहचान यही है कि वह केवल मजबूत को और मजबूत न करे, बल्कि कमजोर को संभालने के लिए भी अपना हाथ आगे बढ़ाए।

खरीदी और 21 क्विंटल प्रति एकड़ के मान से खरीदी का निर्णय लिया। दो वर्षों के बकाया धान बोनास के रूप में 3,716 करोड़ रुपये का भुगतान भी किया गया। वहीं कृषि उन्नति योजना के तहत 24.72 लाख किसानों को 13,320 करोड़ रुपये की राशि अंतरित किए जाने की जानकारी सरकार ने दी है। इन आंकड़ों के पीछे प्रदेश के लाखों परिवारों की अर्थव्यवस्था छिपी है। किसान के लिए फसल का बेहतर मूल्य सिर्फ आय नहीं बढ़ाता। इससे बच्चे की फीस भरती है, घर की जरूरत पूरी होती है, खेती में निवेश होता है और अगली फसल के लिए उम्मीद मजबूत होती है। किसान की जेब मजबूत होगी तो गांव की अर्थव्यवस्था मजबूत होगी—और गांव मजबूत होगा तो छत्तीसगढ़ मजबूत होगा।

❖ जंगल का 'हरा सोना' और वनवासी की मेहनत

छत्तीसगढ़ के वनांचल में रहने वाले परिवारों के लिए जंगल केवल प्रकृति नहीं, बल्कि जीवन और आजीविका का आधार है। तेंदूपत्ता संग्रहण इसी अर्थव्यवस्था का

महत्वपूर्ण हिस्सा है। सरकार ने तेंदूपत्ता संग्रहण की पारिश्रमिक दर 4,000 से बढ़ाकर 5,500 रुपये प्रति मानक बोरा की है। इससे लगभग 13 लाख संग्राहक परिवारों को लाभ पहुंचने की बात सरकारी आंकड़ों में कही गई है। एक साल में लाखों संग्राहकों को सैकड़ों करोड़ रुपये का भुगतान किया गया। यह बदलाव उस हाथ की कीमत बढ़ाता है जो



पक्का मकान : सिर्फ छत नहीं, सम्मान



गरीब परिवार के लिए अपना पक्का मकान किसी सरकारी योजना का एक और आंकड़ा नहीं है। वह बारिश में टपकती छत से मुक्ति है। वह बच्चों के लिए सुरक्षित जगह है। वह सामाजिक सम्मान है। और सबसे बढ़कर—अपने होने का भरोसा है। छत्तीसगढ़ में प्रधानमंत्री आवास योजना के तहत 1.8 लाख से अधिक आवासों को स्वीकृति दी जाने की जानकारी सरकार ने दी है। जब किसी गरीब परिवार को उसके पक्के घर की चाबी मिलती है तो उस क्षण सरकारी योजना का अर्थ बदल जाता है। फाइल पर दर्ज एक स्वीकृति, उस परिवार के लिए जीवनभर की सुरक्षा बन जाती है।

सुबह जंगल जाता है, दिनभर पत्ते चुनता है और फिर उन्हीं पत्तों को परिवार की रोजी-रोटी में बदलता है। जिसे शहर की नजर सिर्फ एक पत्ता समझती है, उसी पत्ते में वनवासी परिवार की पूरी अर्थव्यवस्था छिपी होती है।

आदिवासी अंचल तक पहुंचता विकास

छत्तीसगढ़ का विकास तभी पूर्ण माना जा सकता है, जब उसकी रोशनी शहरों से निकलकर दूरस्थ आदिवासी अंचलों तक पहुंचे। प्रधानमंत्री जनमन योजना के तहत प्रदेश के 53 विकासखंडों की 2,36,5 बसाहटों में विकास कार्य किए जा रहे हैं। वहीं धरती आबा जनजातीय ग्राम उत्कर्ष अभियान के अंतर्गत 6,691 गांवों को विकास कार्यों से जोड़े जाने की जानकारी सरकार ने



दी है। इन योजनाओं की सफलता का सबसे महत्वपूर्ण पैमाना यही होगा कि क्या दूरस्थ गांव के व्यक्ति को वही बुनियादी सुविधाएं मिल पा रही हैं, जिनकी उम्मीद शहर का नागरिक करता है। सड़क, बिजली, पानी, आवास, स्वास्थ्य और शिक्षा—विकास का असली अर्थ यही है कि दूरी चाहे कितनी भी हो, सरकार की पहुंच वहां तक हो।

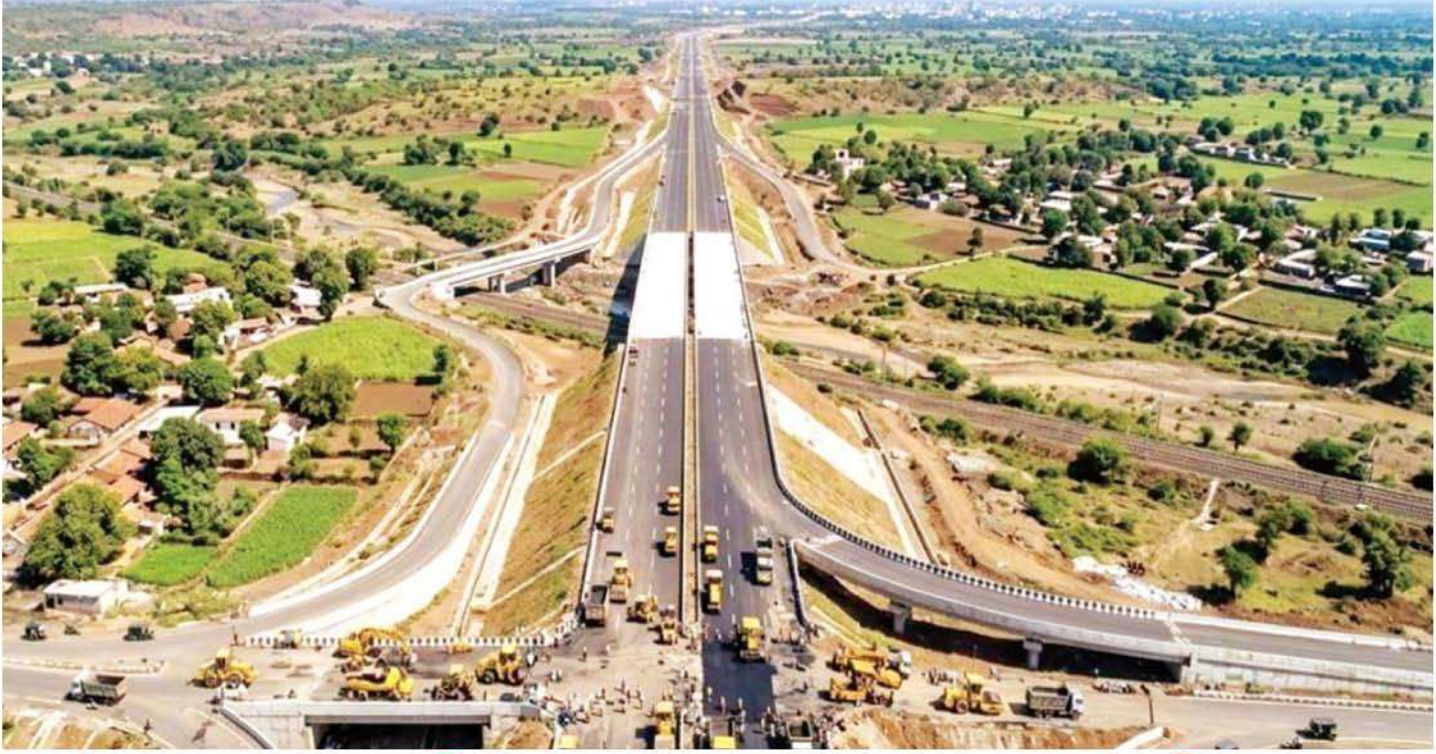
“

सरकार की सबसे बड़ी परीक्षा

विष्णु देव साय सरकार के सामने उपलब्धियों की एक लंबी सूची है। लेकिन लोकतंत्र में हर सूची के सामने एक सवाल खड़ा रहता है—क्या यह लाभ सचमुच अंतिम व्यक्ति तक पहुंचा? अगर किसान की आमदनी बढ़ती है, अगर महिला अपने पैरों पर खड़ी होती है, अगर मजदूर को आर्थिक सुरक्षा मिलती है, अगर वनवासी को अपनी मेहनत का बेहतर मूल्य मिलता है, अगर गरीब के सिर पर पक्की छत आती है, अगर आदिवासी गांव विकास की मुख्यधारा से जुड़ता है—तो फिर योजनाएं केवल सरकारी घोषणाएं नहीं रह जातीं। वे सुशासन का अनुभव बन जाती हैं। और शायद इसी अनुभव को छत्तीसगढ़ की सहज लोकभाषा में एक भावपूर्ण संबोधन मिलता है—‘विष्णु भैया सबके खेवईया।’

लेकिन इस संबोधन की असली ताकत किसी प्रचार में नहीं, लाभार्थी के चेहरे की मुस्कान में है। क्योंकि राजनीति में सरकारें आती-जाती रहेंगी। योजनाओं के नाम बदलते रहेंगे। आंकड़े भी बदलेंगे। लेकिन जिस दिन किसी गरीब के घर में चूल्हा थोड़ा बेहतर जले, किसी मां को अपने बच्चों के भविष्य की चिंता थोड़ी कम हो, किसान को अपनी मेहनत का उचित मूल्य मिले और किसी परिवार को पहली बार लगे किसरकार हमारे साथ खड़ी है, उस दिन कल्याणकारी शासन अपने सबसे मानवीय रूप में दिखाई देता है। और यही वह जगह है, जहां एक मुख्यमंत्री की राजनीतिक पहचान से आगे बढ़कर एक सरकार की सामाजिक पहचान बनती है।

विकास के आंकड़े उत्साह जगाते हैं, लेकिन किसी प्रदेश की असली तरक्की उसके बजट, GDP और परियोजनाओं से नहीं, बल्कि उसके नागरिक की जिंदगी में आए बदलाव से तय होती है।



आंकड़ों में विकास, जमीन पर जिंदगी



राज्य के सामने सबसे बड़ा सवाल केवल सरकारी भर्ती नहीं, बल्कि निजी क्षेत्र में गुणवत्तापूर्ण रोजगार का विस्तार है। निवेश सम्मेलन में हजारों करोड़ के स्पर्ष होना अच्छी खबर है। लेकिन विकास की वास्तविक खबर तब बनेगी जब उन स्पर्ष में से कितनी परियोजनाएँ जमीन पर उतरती हैं, कितने उद्योग स्थापित होते हैं और कितने स्थानीय युवाओं को रोजगार मिलता है।

मध्य प्रदेश विकास की एक नई कहानी लिखने का दावा कर रहा है। बड़ी परियोजनाएँ हैं, बड़ा बजट है, निवेश के बड़े प्रस्ताव हैं, सड़कों और अधोसंरचना का विस्तार है और अर्थव्यवस्था की रफ्तार भी उम्मीद जगाती है। सरकारी आंकड़े बताते हैं कि राज्य की अर्थव्यवस्था लगातार विस्तार कर रही है। 2025-26 में मौजूदा कीमतों पर राज्य की अर्थव्यवस्था की वृद्धि 11 प्रतिशत से अधिक रही और प्रति व्यक्ति आय करीब 1.69 लाख रुपये तक पहुंचने का अनुमान है।

ये आंकड़े निश्चित रूप से महत्वपूर्ण हैं। लेकिन किसी भी लोकतंत्र में आंकड़े कहानी का अंत नहीं होते, बल्कि कई बार असली सवाल की शुरुआत होते हैं। सवाल यह है कि मध्य प्रदेश की अर्थव्यवस्था जितनी तेजी से बढ़ रही है, क्या उसी रफ्तार से मध्य प्रदेश के आम नागरिक की जिंदगी भी बदल रही है? यही वह प्रश्न है जिसे विकास के हर दावे के सामने खड़ा किया जाना चाहिए।

■ GDP बढ़ी, तो घर कितना बढ़ा?

किसी राज्य की आर्थिक वृद्धि उसके तृष्णक से मापी जाती है। GDP बढ़ना अच्छी बात है। यह बताता है कि राज्य में वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन बढ़ रहा है और आर्थिक गतिविधियाँ विस्तार पा रही हैं। लेकिन एक



परिवार के लिए विकास का अर्थ तस्पृक्क नहीं होता। इसके लिए विकास का अर्थ है—नियमित रोजगार, बढ़ती आय, बच्चों की अच्छी शिक्षा, परिवार का बेहतर स्वास्थ्य, किसान को फसल का उचित मूल्य, सुरक्षित भविष्य और महीने के अंत में कुछ बचत।

यहीं पर आर्थिक विकास और मानवीय विकास के बीच का अंतर दिखाई देता है। प्रति व्यक्ति आय का औसत बढ़ना यह नहीं बताता कि समाज के हर वर्ग की आय उसी अनुपात में बढ़ी है। औसत के पीछे असमानताएं छिप सकती हैं। किसी राज्य की अर्थव्यवस्था तेजी से बढ़ सकती है, लेकिन उसका लाभ अलग-अलग वर्गों और क्षेत्रों तक अलग-अलग पहुंच सकता है। इसलिए मध्य प्रदेश के विकास का अगला प्रश्न तस्पृक्क की वृद्धि नहीं, बल्कि उस वृद्धि का वितरण होना चाहिए।

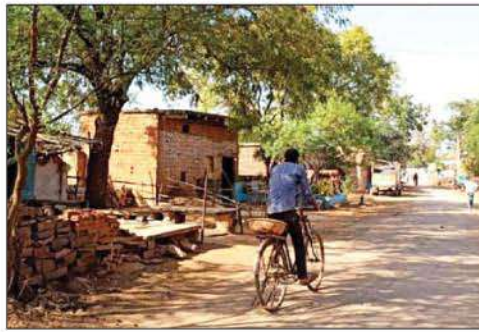
► बड़ा बजट - बड़ा विकास नहीं बनता



मध्य प्रदेश का बजट लगातार बड़ा हो रहा है। 2026-27 में राज्य का बजट आकार लगभग 4.23 लाख करोड़ रुपये रखा गया है और पूंजीगत व्यय के लिए भी बड़ी राशि प्रस्तावित की गई है। सड़कें बनें, पुल बनें, सिंचाई परियोजनाएं आएं, औद्योगिक क्षेत्र विकसित हों—इन सब पर सार्वजनिक निवेश जरूरी है। लेकिन खर्च और परिणाम के बीच एक लंबी दूरी होती है। एक सड़क

तब विकास बनती है जब वह किसान को बाजार तक पहुंचाती है। एक औद्योगिक पार्क तब विकास बनता है जब उसमें उद्योग लगते हैं। उद्योग तब विकास बनता है जब वह स्थायी रोजगार पैदा करता है। और रोजगार तब विकास बनता है जब उससे परिवार की आय और जीवन की गुणवत्ता बेहतर होती है। इसलिए किसी परियोजना की सफलता का पैमाना केवल उसकी लागत नहीं होना चाहिए। उससे पैदा हुई आर्थिक और सामाजिक उपयोगिता भी मापी जानी चाहिए।

► कर्ज: विकास का साधन या भविष्य की जिम्मेदारी?



राज्य सरकारों के लिए कर्ज लेना असामान्य नहीं है। विकास के लिए पूंजी जुटाने में कर्ज की भूमिका होती है। समस्या कर्ज लेने में नहीं, बल्कि उसके इस्तेमाल और उसे चुकाने की क्षमता में है। मध्य प्रदेश के सामने भी यही चुनौती है।

यदि कर्ज का इस्तेमाल ऐसी परिसंपत्तियां बनाने में होता है जो भविष्य में उत्पादन, रोजगार और राजस्व बढ़ाती हैं, तो यह आर्थिक निवेश हो सकता है। लेकिन यदि बढ़ते खर्च का बड़ा हिस्सा ऐसी प्रतिबद्धताओं में चला जाए जिनसे भविष्य की आय नहीं बढ़ती, तो आने वाली पीढ़ियों पर वित्तीय दबाव बढ़ सकता है। इसलिए राज्य के विकास की बहस में यह सवाल भी होना चाहिए—हम आज कितना खर्च कर रहे हैं और उसके बदले कल कितनी आर्थिक क्षमता पैदा कर रहे हैं? यह सवाल किसी सरकार के खिलाफ नहीं, बल्कि किसी भी जिम्मेदार शासन व्यवस्था के पक्ष में है।

► किसान के बिना मध्य प्रदेश की विकास कहानी अधूरी है

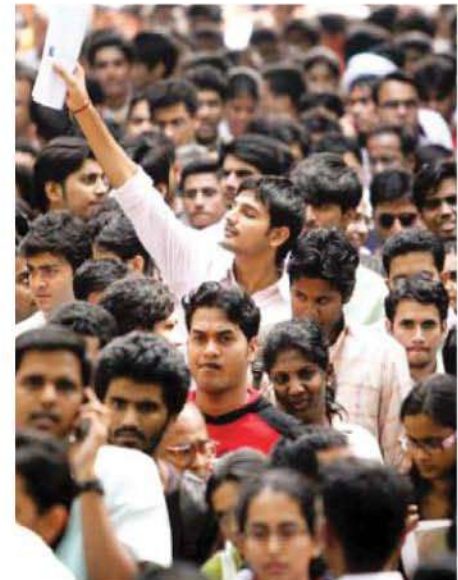
मध्य प्रदेश की अर्थव्यवस्था में कृषि की भूमिका अब भी निर्णायक है। ऐसे में किसान की स्थिति विकास के पूरे मॉडल की परीक्षा



है। कृषि उत्पादन बढ़ना जरूरी है, लेकिन उत्पादन ही किसान की समृद्धि का अंतिम पैमाना नहीं। किसान की वास्तविक आय समझने के लिए लागत, सिंचाई, मौसम, बाजार, भंडारण, परिवहन और फसल के मूल्य—सभी को एक साथ देखना होगा।

यदि खेत में उत्पादन बढ़ रहा है लेकिन खाद, बीज, डीजल, बिजली और मजदूरी की लागत भी तेजी से बढ़ रही है, तो केवल उत्पादन का बढ़ना किसान की समृद्धि की गारंटी नहीं देता। आज मध्य प्रदेश को कृषि नीति में एक बदलाव की जरूरत है—उत्पादन से आय की ओर कितना उत्पादन हुआ, यह महत्वपूर्ण है। लेकिन उससे ज्यादा महत्वपूर्ण है—किसान के हाथ में कितना बचा?

► युवा- सबसे बड़ा अवसर या सबसे बड़ी चुनौती



मध्य प्रदेश के पास युवा आबादी की बड़ी ताकत है। यही आबादी राज्य को आर्थिक रूप से नई ऊंचाई दे सकती है। लेकिन युवा शक्ति तभी ताकत बनती है

जब उसके पास शिक्षा, कौशल और रोजगार हो। आज लाखों युवा प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करते हैं। सरकारी नौकरी उनके लिए स्थिरता का प्रतीक है, लेकिन सरकारी नौकरियों की संख्या सीमित है।

इसलिए राज्य के सामने सबसे बड़ा सवाल केवल सरकारी भर्ती नहीं, बल्कि निजी क्षेत्र में गुणवत्तापूर्ण रोजगार का विस्तार है। निवेश सम्मेलन में हजारों करोड़ के स्थ होना अच्छी खबर है। लेकिन विकास की वास्तविक खबर तब बनेगी जब उन स्थ में से कितनी परियोजनाएं जमीन पर उतरती हैं, कितने उद्योग स्थापित होते हैं और कितने स्थानीय युवाओं को रोजगार मिलता है।

निवेश का असली आंकड़ा MoU नहीं, उससे पैदा हुई स्थायी नौकरियां हैं।

❖ शिक्षा और स्वास्थ्य: बजट से आगे की परीक्षा



किसी भी प्रदेश का भविष्य उसकी सड़कों और इमारतों से जितना बनता है, उससे कहीं अधिक उसके स्कूलों और अस्पतालों में बनता है। सरकार शिक्षा और स्वास्थ्य पर हजारों करोड़ रुपये खर्च करती है। यह जरूरी भी है। लेकिन शिक्षा की सफलता का पैमाना बजट नहीं, सीखने का स्तर होना चाहिए। स्वास्थ्य की सफलता का पैमाना अस्पताल की इमारत नहीं, मरीज को मिला समय पर और गुणवत्तापूर्ण उपचार होना चाहिए।

एक सरकारी स्कूल में भवन है, लेकिन शिक्षक नहीं है तो समस्या बनी रहेगी। अस्पताल है, लेकिन डॉक्टर या दवा नहीं है तो भवन स्वास्थ्य सेवा नहीं बन सकता। इसलिए विकास की अगली बहस 'कितना खर्च हुआ' से 'क्या परिणाम मिला' की ओर जानी चाहिए।

❖ महिला सशक्तीकरण- खाते में पैसा या अपने पैरों पर खड़ी महिला?



मध्य प्रदेश में महिला-केंद्रित योजनाओं ने राजनीति और सामाजिक नीति दोनों में महत्वपूर्ण स्थान बनाया है। प्रत्यक्ष आर्थिक सहायता से परिवारों को तत्काल राहत मिल सकती है और महिलाओं की आर्थिक भूमिका मजबूत हो सकती है।

लेकिन महिला सशक्तीकरण की मंजिल इससे आगे है। क्या महिला की अपनी स्थायी आय है? क्या वह रोजगार या उद्यम से जुड़ी है? क्या उसके पास संपत्ति पर अधिकार है? क्या परिवार के आर्थिक निर्णयों में उसकी निर्णायक भूमिका है? किसी महिला के खाते में पैसा पहुंचना कल्याण है। लेकिन महिला की अपनी आय, अपना निर्णय और अपनी आर्थिक स्वतंत्रता होना सशक्तीकरण है।

❖ विकास की असली तस्वीर जिलों में मिलेगी

भोपाल के मंत्रालय और सरकारी रिपोर्टों से मध्य प्रदेश की एक तस्वीर दिखाई देती है। लेकिन प्रदेश की दूसरी तस्वीर गांवों, कस्बों और छोटे शहरों में है। इंदौर की आर्थिक गति पूरे प्रदेश की औसत स्थिति नहीं है। भोपाल की सुविधाएं हर जिले में उपलब्ध नहीं हैं। किसी आदिवासी जिले की विकास यात्रा को महानगर के विकास से नहीं मापा जा सकता। यही कारण है कि मध्य प्रदेश का अगला विकास मॉडल जिला-स्तरीय असमानताओं को केंद्र में रखे बिना पूरा नहीं हो सकता।

किस जिले में रोजगार है? कहाँ से सबसे ज्यादा पलायन हो रहा है? कहाँ स्वास्थ्य सुविधाएं कमजोर हैं? कहाँ स्कूलों में शिक्षक कम हैं? कहाँ सिंचाई उपलब्ध है? कहाँ उद्योग आए और कहाँ सिर्फ

घोषणाएं हुईं? इन सवालों के जवाब ही बताएंगे कि विकास कितना व्यापक है।

❖ अब विकास का रिपोर्ट कार्ड बदलना होगा

मध्य प्रदेश ने आर्थिक विकास की दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति की है। इसे नकारना वास्तविकता से आंखें मूंदना होगा। लेकिन विकास की उपलब्धियों को स्वीकार करने का अर्थ यह नहीं कि सवाल पूछना बंद कर दिया जाए। बल्कि मजबूत होती अर्थव्यवस्था के साथ सवाल और बड़े होने चाहिए।

अब मध्य प्रदेश को केवल यह नहीं बताना होगा कि GDP कितनी बढ़ी। उसे यह भी बताना होगा कि—किसान की वास्तविक आय कितनी बढ़ी? युवाओं के लिए कितने नए रोजगार बने? महिलाओं की श्रम भागीदारी कितनी बढ़ी? बच्चों का सीखने का स्तर कितना सुधरा? स्वास्थ्य सेवाओं



की पहुंच कितनी बढ़ी? प्रति परिवार बचत और क्रय शक्ति में कितना बदलाव आया? और सबसे महत्वपूर्ण—राज्य के अलग-अलग हिस्सों के बीच विकास की दूरी कितनी कम हुई? क्योंकि विकास का अर्थ केवल बड़ा राज्य नहीं है। विकास का अर्थ है—बेहतर ज़िंदगी।

बड़ा बजट महत्वपूर्ण है। बड़ी सड़कें महत्वपूर्ण हैं। बड़े उद्योग महत्वपूर्ण हैं। बड़ा तश्तक महत्वपूर्ण है। लेकिन अंततः किसी सरकार और किसी विकास मॉडल की सबसे बड़ी परीक्षा किसी एक्सेल शीट में नहीं होती। वह होती है एक किसान के खेत में। एक युवा की नौकरी में। एक महिला की अपनी कमाई में। एक बच्चे की किताब में। एक मरीज को मिले इलाज में। और उस परिवार की ज़िंदगी में, जिसे महीने के अंत में यह महसूस हो कि—

हां, पिछले साल की तुलना में इस साल हमारी ज़िंदगी सचमुच थोड़ी बेहतर हुई है। यही वह बिंदु है जहां आंकड़ों का विकास, जमीन की ज़िंदगी से मिलता है।

मेडिकल हब या मरीजों की मजबूरी ?



“ किसी अस्पताल की असली परीक्षा तब नहीं होती, जब उसका उद्घाटन होता है। न तब, जब उसके आंकड़े उपलब्धियों की सूची में दर्ज होते हैं। उसकी असली परीक्षा तब होती है, जब किसी परिवार का कोई अपना जिंदगी और मौत के बीच अस्पताल के बिस्तर पर होता है। ”

एक प्रसूता की मौत, ब्लड बैंक पर कार्रवाई और अस्पताल प्रशासन में बदलाव... क्या ये अलग-अलग घटनाएं हैं, या रीवा की स्वास्थ्य व्यवस्था के भीतर मौजूद किसी बड़ी समस्या के संकेत ?

किसी अस्पताल की असली परीक्षा तब नहीं होती, जब उसका उद्घाटन होता है। न तब, जब उसके आंकड़े उपलब्धियों की सूची में दर्ज होते हैं। उसकी असली परीक्षा तब होती है, जब किसी परिवार का कोई अपना जिंदगी और मौत के बीच अस्पताल के बिस्तर पर होता है।

रीवा में हाल की घटनाओं ने इसी परीक्षा को सामने ला खड़ा किया है। संजय गांधी स्मृति चिकित्सालय में एक प्रसूता और उसके बच्चे की मौत के बाद इलाज में कथित लापरवाही के आरोप लगे। जांच हुई। चिकित्सकीय और नर्सिंग स्टाफ पर कार्रवाई की गई। संबंधित ब्लड बैंक को सील किया गया। अस्पताल प्रशासन में बदलाव हुआ। हर कार्रवाई जरूरी है लेकिन इन कार्रवाइयों के बीच एक सवाल और बढ़ा होकर सामने आता है—

अगर व्यवस्था ठीक थी, तो इतनी कार्रवाई की जरूरत क्यों पड़ी ? और अगर व्यवस्था में गंभीर खामियां थीं, तो वे उस परिवार की त्रासदी से पहले क्यों नहीं दिखाई दीं ? यही सवाल इस पूरे मामले को एक अस्पताल की घटना से उठाकर रीवा के स्वास्थ्य मॉडल तक ले जाता है।

विंध्य की स्वास्थ्य उम्मीदों का केंद्र

संजय गांधी स्मृति चिकित्सालय केवल रीवा शहर का अस्पताल नहीं है। यह विंध्य क्षेत्र के बड़े हिस्से के लिए एक महत्वपूर्ण सरकारी चिकित्सा केंद्र है। गंभीर बीमारी, दुर्घटना, प्रसव संबंधी जटिलता या ऐसी स्थिति जिसमें स्थानीय स्वास्थ्य सुविधाएं पर्याप्त न हों, मरीजों को अक्सर रीवा का रुख करना पड़ता है। यानी अस्पताल पर दबाव केवल उसकी अपनी आबादी का नहीं है।

यहीं से रीवा के स्वास्थ्य मॉडल का पहला सवाल निकलता है—क्या एक मेडिकल कॉलेज और बड़े अस्पताल पर बढ़ती मरीजों की भीड़ को ही स्वास्थ्य व्यवस्था की सफलता माना जा सकता है ?

शायद नहीं। अगर गांव का प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र कमजोर है, सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र में विशेषज्ञ नहीं हैं और जिला स्तर पर जरूरी सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं, तो गंभीर मरीज आखिर पहुंचेगा कहाँ ? रीवा में। इसलिए संजय गांधी अस्पताल की भीड़ को केवल अस्पताल की समस्या मानना पूरे तंत्र को अधूरा देखना होगा। यह पूरे referral system का सवाल है।

एक मौत के बाद सामने आए कई प्रश्न

कल्पना मिश्रा और उनके बच्चे की मौत के बाद परिवार की ओर से इलाज में लापरवाही के आरोप लगाए गए। प्रशासन ने जांच के बाद अस्पताल के कुछ कर्मचारियों पर कार्रवाई की। संबंधित ब्लड बैंक पर भी स्वास्थ्य विभाग ने कार्रवाई की। यहां सावधानी जरूरी है।

किसी घटना में अंतिम चिकित्सकीय जिम्मेदारी जांच पूरी होने के बाद ही तय होनी चाहिए। लेकिन सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था के लिए हर ऐसी घटना एक system audit का अवसर भी होनी चाहिए। क्योंकि सवाल सिर्फ

यह नहीं है कि उस दिन क्या हुआ। सवाल यह है कि—क्या ऐसी घटना दोबारा होने से रोकने के लिए व्यवस्था में बदलाव हुआ? यही फर्कदोषी खोजने और व्यवस्था सुधारने के बीच है।

जहां छोटी चूक की कीमत बहुत बड़ी हो सकती है

रक्त किसी अस्पताल की सामान्य सुविधा नहीं है। आपात स्थिति में यह जीवन बचाने वाला सबसे महत्वपूर्ण संसाधन हो सकता है। इसलिए रक्त की जांच, मिलान, भंडारण और ट्रांसफ्यूजन की पूरी प्रक्रिया में एक भी गंभीर चूक की गुंजाइश नहीं होनी चाहिए। संबंधित ब्लड बैंक को कार्रवाई के बाद सील किए जाने की खबर ने इसलिए गंभीर प्रश्न खड़े किए हैं लेकिन इस मामले का अंतिम निष्कर्ष जांच ही तय करेगी। फिलहाल बड़ा सवाल यह होना चाहिए—

क्या रीवा में blood safety का पूरा सिस्टम नियमित और स्वतंत्र ऑडिट से गुजरता है?

कितने ब्लड बैंक हैं? उनकी गुणवत्ता जांच कितनी नियमित है? रक्त के storage और testing protocols का पालन कितना सख्त है? और किसी शिकायत के बाद कार्रवाई होने से पहले monitoring की व्यवस्था कितनी प्रभावी है? स्वास्थ्य व्यवस्था की मजबूती का मतलब केवल सुविधा उपलब्ध होना नहीं है। सुविधा का सुरक्षित होना उससे भी जरूरी है।

क्या कार्रवाई ही जवाब है?

किसी गंभीर घटना के बाद डॉक्टर, नर्स या अधिकारी पर कार्रवाई हो सकती है। यह जवाबदेही का हिस्सा है लेकिन अगर हर बार समाधान किसी व्यक्ति को हटाने तक सीमित रह जाए, तो व्यवस्था की मूल समस्या वहीं रह सकती है। इसलिए सवाल व्यक्ति से ज्यादा प्रक्रिया का है। क्या emergency protocol स्पष्ट है? क्या गंभीर मरीजों की monitoring पर्याप्त है? क्या blood transfusion की हर प्रक्रिया documented और auditable है? क्या high-risk pregnancy के लिए समय रहते specialist intervention सुनिश्चित होता है? क्या अस्पताल में पर्याप्त प्रशिक्षित nursing staff है? और क्या किसी भी adverse event की मेडिकल ऑडिट होती है? जब तक इन प्रश्नों के उत्तर व्यवस्था के स्तर पर नहीं मिलते, तब तक कार्रवाई केवल घटना का उत्तर होगी—समस्या का समाधान नहीं।

मेडिकल हब की पहचान मरीजों की



भीड़ नहीं

रीवा के पास मेडिकल कॉलेज है। विशेषज्ञ चिकित्सा की क्षमता है। बड़े अस्पताल हैं। आसपास के जिलों से मरीज आते हैं। यह निश्चित रूप से एक ताकत है। लेकिन इसे मेडिकल हब कहने से पहले एक और सवाल पूछा जाना चाहिए—

क्या रीवा मरीजों को सिर्फ खींच रहा है, या उन्हें बेहतर स्वास्थ्य परिणाम भी दे रहा है?

किसी बड़े अस्पताल के बाहर लगी लंबी कतार उसकी लोकप्रियता बता सकती है। लेकिन यह जरूरी नहीं कि वह स्वास्थ्य व्यवस्था की सफलता भी बता रही हो। सफलता तब होगी जब—

● मरीज को समय पर डॉक्टर मिले, ● जरूरी जांच तुरंत हो, ● दवा उपलब्ध हो, ● रक्त सुरक्षित मिले, ● आपातकालीन उपचार में देरी न हो, ● रेफरल व्यवस्था मजबूत हो, ● और मरीज के परिजन को सही जानकारी मिले।

भीड़ स्वास्थ्य व्यवस्था की मजबूती का प्रमाण नहीं है। कई बार वह आसपास की कमजोर व्यवस्था का प्रमाण होती है।

अस्पताल में इलाज के साथ भरोसा भी चाहिए

स्वास्थ्य व्यवस्था में तकनीक और विशेषज्ञता जरूरी है। लेकिन मरीज के लिए एक और चीज उतनी ही महत्वपूर्ण है—भरोसा। जिस परिवार का सदस्य अस्पताल में भर्ती है, वह डॉक्टर की विशेषज्ञता के साथ यह भी चाहता है कि उसे सच बताया जाए। क्या स्थिति गंभीर है? क्या खतरा है? कौन-सा इलाज हो रहा है? क्या विकल्प हैं? और यदि कोई अनहोनी हो जाए तो—आखिर हुआ क्या?

यहीं अस्पताल प्रशासन की संवेदनशीलता महत्वपूर्ण हो जाती है। किसी परिवार को अपना सदस्य खोने के बाद सिर्फ एक सरकारी बयान

या मुआवजे से संतोष नहीं होता। उसे स्पष्ट जवाब और सम्मानजनक व्यवहार भी चाहिए।

रीवा को Health System चाहिए, सिर्फ Healthcare Infrastructure नहीं

यही शायद पूरी बहस का सबसे महत्वपूर्ण बिंदु है। अस्पताल बनाना अपेक्षाकृत आसान है। व्यवस्था बनाना कठिन है। मशीन खरीदना आसान है। उसे प्रशिक्षित स्टाफ से नियमित चलाना कठिन है। नई बिल्डिंग बनाना आसान है। इसमें 24 घंटे गुणवत्तापूर्ण सेवा सुनिश्चित करना कठिन है।

हाल की घटना ने एक अवसर दिया है। इस अवसर का इस्तेमाल केवल दोष तय करने में नहीं, बल्कि स्वास्थ्य व्यवस्था को फिर से देखने में होना चाहिए। रीवा में एकस्वतंत्र Health System Audit क्यों न हो? सरकारी और निजी अस्पतालों की emergency readiness की समीक्षा क्यों न हो? ब्लड बैंकों का नियमित सार्वजनिक audit क्यों न हो? मातृ मृत्यु के प्रत्येक मामले की clinical review व्यवस्था क्यों न बने? अस्पतालों में patient grievance system को समयबद्ध क्यों न किया जाए? और सबसे महत्वपूर्ण—

क्या स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता का जिला स्तर पर सार्वजनिक Report Card जारी किया जा सकता है?

ऐसा रिपोर्ट कार्ड जिसमें सिर्फ कितने अस्पताल हैं यह न बताया जाए, बल्कि यह भी बताया जाए कि मरीज को वास्तव में कितना और कैसा इलाज मिला।

रीवा के पास मेडिकल हब बनने की क्षमता है। लेकिन यह पहचान केवल बड़े अस्पताल, मेडिकल कॉलेज और विशेषज्ञ डॉक्टरों से नहीं बनेगी। इसके लिए एक ऐसी स्वास्थ्य व्यवस्था बनानी होगी जिसमें मरीज अस्पताल की सीढ़ियां चढ़ते समय यह न सोचे कि—‘पता नहीं यहां क्या होगा।’ बल्कि उसके मन में भरोसा हो—‘यहां मेरी जिंदगी सुरक्षित हाथों में है।’ यही वह अंतर है जो मेडिकल इंफ्रास्ट्रक्चर को मेडिकल सिस्टम बनाता है। और आज रीवा के सामने सबसे बड़ा सवाल यही है—

क्या हम अस्पताल बना रहे हैं, या ऐसी स्वास्थ्य व्यवस्था बना रहे हैं जिस पर जिंदगी के सबसे कठिन क्षण में भरोसा किया जा सके?

क्योंकि अंततः किसी स्वास्थ्य मॉडल की सफलता उसके बजट, भवन या मशीनों से नहीं मापी जाती। वह उस मरीज की आंखों में दिखाई देती है, जो इलाज के बाद अपने घर लौटता है।

सोता विपक्ष, कटघरे में जांच और सवालियों में लोकतंत्र



आज की राजनीति में पोस्टर प्रभावशाली हैं, नारे तेज हैं और सोशल मीडिया अभियान बेहद शक्तिशाली हैं। लेकिन लोकतंत्र पोस्टरों से नहीं चलता। लोकतंत्र संस्थाओं से चलता है। 'कुंभकर्ण' का पोस्टर राजनीतिक संदेश दे सकता है, लेकिन वह विपक्ष की भूमिका का विकल्प नहीं हो सकता। किसी नेता की गिरफ्तारी राजनीतिक कार्रवाई हो सकती है, लेकिन वह पेशेवर जांच का विकल्प नहीं है।

हरिषित पाण्डेय, हैदराबाद

तेलंगाना की दो अलग-अलग घटनाएं एक ही सवाल पर आकर ठहरती हैं—लोकतंत्र में जवाबदेही आखिर किसकी है? जब विपक्ष जनता से दूर हो और जांच एजेंसियां अदालत में अपने साक्ष्य साबित न कर पाएं, तब हार किसी नेता या पार्टी की नहीं, संस्थाओं की होती है।

तेलंगाना की हालिया दो घटनाएं पहली नजर में बिल्कुल अलग दिखाई देती हैं। एक तरफ कांग्रेस ने भारत राष्ट्र समिति के अध्यक्ष और पूर्व मुख्यमंत्री के. चंद्रशेखर राव, यानी KCR, को 'कुंभकर्ण' बताकर राजनीतिक प्रदर्शन किया। दूसरी तरफ 2022 में पैगंबर मोहम्मद और इस्लाम को लेकर की गई विवादित टिप्पणियों के मामले में गोशामहल विधायक टी. राजा सिंह को अदालत ने बरी कर दिया। एक मामले में सवाल है—विपक्ष कहां है? दूसरे में सवाल है—जांच आखिर इतनी कमजोर क्यों थी? लेकिन दोनों घटनाओं को ध्यान से देखें तो इनके केंद्र में एक ही शब्द दिखाई देता है—जवाबदेही।

लोकतंत्र में नेता जवाबदेह है, विपक्ष जवाबदेह है, सरकार जवाबदेह है और जांच एजेंसियां भी जवाबदेह हैं। समस्या तब शुरू होती है जब इनमें से कोई अपनी जिम्मेदारी से दूर हो जाता है। समस्या तब और गंभीर होती है, जब बाकी संस्थाएं उस कमी को भरने के बजाय केवल राजनीतिक तमाशे में व्यस्त हो जाती हैं।

'लोकतंत्र में सबसे खतरनाक खामोशी जनता की नहीं, उन लोगों की होती है जिन्हें जनता की आवाज बनना था।'

'कुंभकर्ण' का राजनीतिक संदेश

कांग्रेस द्वारा KCR को 'कुंभकर्ण' के रूप में प्रस्तुत करना केवल एक पोस्टर की राजनीति नहीं है। भारतीय राजनीति में प्रतीकों और व्यंग्य का लंबा इतिहास रहा है। लेकिन किसी राजनीतिक प्रतीक की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह जनता के मन में पहले से मौजूद सवाल को कितना प्रभावी ढंग से सामने लाता है। यहां सवाल है—क्या सत्ता से बाहर होने के बाद विपक्ष उतना सक्रिय है, जितना उसे होना चाहिए?

'सरकार की असली परीक्षा चुनाव में नहीं, रोज पूछे जाने वाले सवालियों में होती है।'

विपक्ष केवल चुनाव लड़ने वाली पार्टी नहीं होता। वह लोकतंत्र की निगरानी व्यवस्था का महत्वपूर्ण हिस्सा होता है। सरकार के फैसलों पर सवाल उठाना, जनता की शिकायतों को राजनीतिक मंच देना और सत्ता के सामने वैकल्पिक दृष्टि रखना विपक्ष की मूल जिम्मेदारी है। यदि कोई बड़ा विपक्षी नेता लंबे समय तक जनता के बीच सक्रिय दिखाई नहीं देता, तो उसके राजनीतिक प्रतिद्वंद्वी को हमला करने का अवसर स्वाभाविक रूप से मिलता है।

लेकिन कांग्रेस को भी समझना होगा कि कमजोर विपक्ष किसी सरकार की स्थायी उपलब्धि नहीं होता। मजबूत लोकतंत्र के लिए मजबूत विपक्ष जरूरी है। जिस व्यवस्था में सरकार से प्रभावी ढंग से सवाल पूछने वाला कोई नहीं होता, वहां सत्ता धीरे-धीरे आलोचना को



असुविधा समझने लगती है।

◆ अदालत के सामने कमजोर जांच

टी. राजा सिंह के मामले में अदालत का फैसला एक दूसरी गंभीर समस्या की ओर संकेत करता है। 2022 में उनके वीडियो के बाद हैदराबाद में विरोध हुआ, तनाव पैदा हुआ और कानून-व्यवस्था प्रभावित हुई। गिरफ्तारी हुई, राजनीतिक कार्रवाई हुई और मामला व्यापक बहस का हिस्सा बना लेकिन अदालत के आदेश में जांच और साक्ष्यों की जिन कमियों का उल्लेख हुआ, वे जांच एजेंसियों की कार्यप्रणाली पर गंभीर प्रश्न खड़े करती हैं।

‘गिरफ्तारी खबर बन सकती है, लेकिन दोष सिद्धि के लिए खबर नहीं—प्रमाण चाहिए।’

यदि डिजिटल साक्ष्य की कस्टडी चेन पर सवाल हों, मूल उपकरण जब्त नहीं किया गया हो, अनुवाद की विश्वसनीयता विवादित हो या जांच अधिकारी महत्वपूर्ण तथ्यों का पर्याप्त सत्यापन न करे, तो अदालत में अभियोजन पक्ष का कमजोर पड़ना स्वाभाविक है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि कमजोर जांच किसी आरोपी की जीत नहीं होती। वह जांच व्यवस्था की हार होती है।

कानून का उद्देश्य किसी व्यक्ति को हर हाल में दोषी ठहराना नहीं है। कानून का उद्देश्य दोषी को कानूनी प्रमाणों के आधार पर सजा देना और निर्दोष को संदेह या जनभावना के आधार पर सजा से बचाना है। यही अंतर न्याय और भीड़ के फैसले के बीच मौजूद है।

◆ सोशल मीडिया का फैसला

आज किसी विवादित वीडियो या बयान के सामने आते ही सोशल मीडिया पर फैसला शुरू हो जाता है। कुछ सेकंड की क्लिप वायरल होती है। प्रतिक्रियाएं आती

हैं। हैशटैग बनते हैं। राजनीतिक बयान सामने आते हैं और समाज का एक हिस्सा अदालत से पहले ही आरोपी को दोषी या निर्दोष घोषित कर देता है। लेकिन अदालत का काम जनभावना को दोहराना नहीं है। अदालत कानून, साक्ष्य और प्रक्रिया के आधार पर फैसला देती है।

‘अदालतें भावनाओं को खारिज नहीं करतीं; वे अपराध तय करने के लिए प्रमाण मांगती हैं।’

किसी बयान का आपत्तिजनक होना और उसका कानूनी रूप से अपराध सिद्ध होना दो अलग-अलग बातें हैं। किसी समुदाय की भावनाएं आहत हो सकती हैं और किसी बयान की व्यापक आलोचना हो सकती है, लेकिन किसी व्यक्ति को अपराधी घोषित करने के लिए अभियोजन पक्ष को कानूनी मानकों के अनुसार आरोप साबित करने होते हैं। यही न्यायिक प्रक्रिया है। यदि हम चाहते हैं कि कानून हमारे लिए निष्पक्ष रहे, तो हमें स्वीकार करना होगा कि कानून हमारे राजनीतिक विरोधी के लिए भी उतना ही निष्पक्ष रहे।

◆ अनुपस्थिति की दो कहानियां

KCR को लेकर उठे सवाल राजनीतिक अनुपस्थिति से जुड़े हैं। टी. राजा सिंह के मामले में अदालत के फैसले ने जांच की प्रक्रियागत अनुपस्थिति को सामने रखा। एक तरफ प्रश्न है—नेता जनता के बीच कितना मौजूद है? दूसरी तरफ प्रश्न है—जांच एजेंसी अपने काम में कितनी सावधान और सक्षम थी? लोकतंत्र में अनुपस्थिति केवल शारीरिक नहीं होती।

कोई नेता मंच पर मौजूद हो सकता है, लेकिन जनता के मुद्दों से अनुपस्थित हो सकता है। कोई सरकार रोज बयान दे सकती है, लेकिन जवाबदेही से अनुपस्थित हो सकती है। कोई जांच एजेंसी हजारों पत्रों की चार्जशीट दाखिल कर सकती है, लेकिन तथ्य की गहराई से जांच करने में अनुपस्थित हो सकती है। इसलिए लोकतंत्र में केवल दिखाई देना पर्याप्त नहीं है। जिम्मेदारी के साथ मौजूद रहना जरूरी है।

◆ नारे और संस्थाएं

आज की राजनीति में पोस्टर प्रभावशाली हैं, नारे तेज हैं और सोशल मीडिया अभियान

बेहद शक्तिशाली हैं। लेकिन लोकतंत्र पोस्टरों से नहीं चलता। लोकतंत्र संस्थाओं से चलता है। ‘कुंभकर्ण’ का पोस्टर राजनीतिक संदेश दे सकता है, लेकिन वह विपक्ष की भूमिका का विकल्प नहीं हो सकता। किसी नेता की गिरफ्तारी राजनीतिक कार्रवाई हो सकती है, लेकिन वह पेशेवर जांच का विकल्प नहीं है। वायरल वीडियो जनभावना पैदा कर सकता है, लेकिन वह अदालत में प्रमाण का विकल्प नहीं हो सकता।

राजनीति को तत्काल प्रतिक्रिया चाहिए। न्याय को प्रक्रिया चाहिए। राजनीति को नारे चाहिए। न्याय को प्रमाण चाहिए। लोकतंत्र को दोनों के बीच की सीमा बनाए रखनी होती है।

‘जब राजनीति नारे से और न्याय अधूरे साक्ष्य से चलने लगे, तब सबसे पहले सच कमजोर पड़ता है।’

◆ असली सवाल

तेलंगाना की ये दोनों घटनाएं केवल दो नेताओं या दो राजनीतिक दलों की कहानी नहीं हैं। ये उस व्यापक संकट की ओर संकेत करती हैं जिसमें राजनीति में सक्रियता की जगह प्रतीक ले रहे हैं और जांच में पेशेवर मजबूती की जगह जल्दबाजी विपक्ष अगर कमजोर होगा तो सरकार की जवाबदेही कमजोर होगी। जांच अगर कमजोर होगी तो न्याय की विश्वसनीयता पर सवाल उठेंगे। और जब जनता हर जटिल मामले का फैसला सोशल मीडिया पर करने लगेगी, तब संस्थाओं पर भरोसा भी कमजोर होगा।

लोकतंत्र की सबसे बड़ी जरूरत ‘कुंभकर्ण’ ढूंढना नहीं है। लोकतंत्र की सबसे बड़ी जरूरत यह सुनिश्चित करना है कि सत्ता, विपक्ष और संस्थाएं—तीनों जागती रहें। क्योंकि किसी एक नेता की राजनीतिक निष्क्रियता से बड़ा खतरा वह दिन है, जब पूरी व्यवस्था अपनी जिम्मेदारी निभाना बंद कर दे। और उस दिन लोकतंत्र केवल चुनावों में दिखाई देगा—जनता के जीवन में नहीं।

‘लोकतंत्र को जागे हुए नेता, सक्रिय विपक्ष और निष्पक्ष जांच चाहिए। इनमें से कोई एक भी सो गया, तो उसकी कीमत अंततः जनता को चुकानी पड़ती है।’

Longevity

लंबी उम्र नहीं, जिंदगी को लंबा जीने की कला



सवाल सिर्फ यह नहीं कि हम कितने साल जिएंगे, बल्कि यह है कि उन वर्षों में कितना जीवन बचा रहेगा

कल्पना कीजिए, एक ऐसी दवा आपके सामने है जो आपकी उम्र 70 से बढ़ाकर 100 वर्ष कर सकती है। लेकिन वह यह गारंटी नहीं देती कि उन अतिरिक्त वर्षों में आपका शरीर स्वस्थ और स्वतंत्र रहेगा। क्या आप फिर भी उसे लेना चाहेंगे? शायद यही वह सवाल है जिसने आधुनिक चिकित्सा विज्ञान को Lifespan से Healthspan की ओर मोड़ा है।

मनुष्य हमेशा से मृत्यु को समझना और जीवन को लंबा करना चाहता रहा है। आज विज्ञान कोशिकाओं, जीन, हार्मोन, माइटोकॉन्ड्रिया और मेटाबोलिज्म तक पहुंच चुका है। दूसरी ओर, भारतीय परंपरा हजारों वर्षों से शरीर के साथ आहार, दिनचर्या, मन, चेतना और जीवन के उद्देश्य को भी स्वास्थ्य से जोड़ती रही है।

लेकिन इन दोनों को एक ही भाषा में समझना उचित नहीं होगा। आधुनिक विज्ञान आज जिस सवाल को प्रयोगशालाओं में पूछ रहा है, भारतीय परंपरा उसे बहुत पहले एक अलग भाषा में पूछ चुकी थी—जीवन कितना लंबा हो, यह महत्वपूर्ण है; लेकिन जीवन कैसा हो, यह उससे भी बड़ा प्रश्न है। फिर भी एक सवाल सबके केंद्र में दिखाई देता है—क्या लंबी उम्र ही पर्याप्त है, या ऐसी उम्र अधिक महत्वपूर्ण है जिसमें शरीर स्वस्थ, मन

सक्रिय और जीवन सार्थक बना रहे?

आज चिकित्सा ने जीवन बचाने की क्षमता को बहुत बढ़ाया है, लेकिन बढ़ती उम्र के साथ डायबिटीज, हृदय रोग, मोटापा, कमजोरी, मानसिक तनाव और निर्भरता जैसी समस्याएं भी बढ़ रही हैं। इसलिए आधुनिक Longevity Science का लक्ष्य केवल जीवन के वर्ष बढ़ाना नहीं, बल्कि स्वस्थ और सक्रिय वर्षों को बढ़ाना है।

यही बात भारतीय जीवन-दृष्टि को इस बहस से जोड़ती है। उपनिषद् मनुष्य को शरीर से आगे देखते हैं। आयुर्वेद स्वास्थ्य की रक्षा को जीवन का आधार मानता है। मार्कण्डेय दीर्घायु की आकांक्षा के प्रतीक हैं, तो ययाति

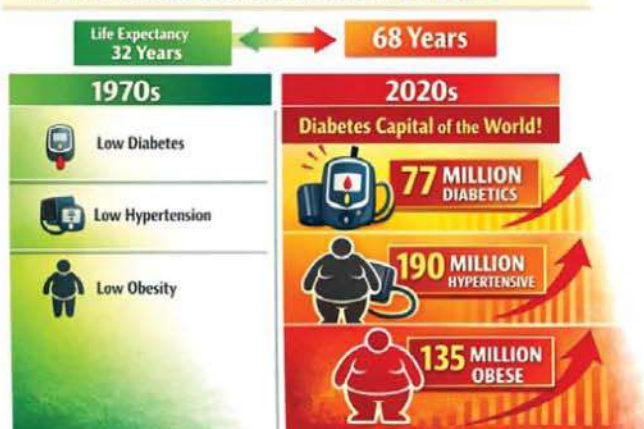
की कथा पूछती है—यदि युवावस्था और भोग का समय बढ़ भी जाए, तो क्या इच्छाएं कभी समाप्त होंगी?

दीर्घायु: आयु से आगे की बात

आयुर्वेद में जीवन को केवल शरीर के जीवित रहने तक सीमित नहीं किया गया। चरक संहिता के प्रारंभिक अध्याय दीर्घजीवितीयमें आयु, स्वास्थ्य और जीवन के विभिन्न पक्षों पर चर्चा मिलती है। आयुर्वेद का उद्देश्य रोग होने के बाद उपचार करना ही नहीं, बल्कि स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना भी है। इस दृष्टि से दीर्घायु का अर्थ केवल अधिक वर्ष नहीं है।

आधुनिक विज्ञान इसे दो शब्दों में समझाता है—**Lifespan** और **Healthspan**। Lifespan है कुल जीवन अवधि, जबकि Healthspan वह समय है जिसमें व्यक्ति स्वस्थ, सक्रिय और यथासंभव स्वतंत्र रह सके। असली चुनौती यही है कि जीवन के अंतिम वर्षों को बीमारी और निर्भरता के वर्षों में बदलने से कैसे रोका जाए।

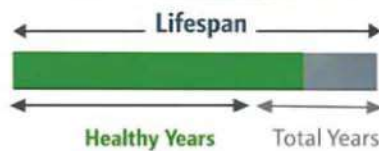
India's Health Transformation: 50 Years



Short Healthspan, Long Lifespan



Optimal Healthspan, Shorter Lifespan



दीर्घायु की पहली सीढ़ी

शरीर जिस पदार्थ से बनता और चलता है, उसे नजरअंदाज करके स्वस्थ उम्र की कल्पना नहीं की जा सकती। यही कारण है कि आधुनिक Nutritional Medicine में भोजन को स्वास्थ्य की बुनियादी चिकित्सा-व्यवस्था का हिस्सा माना जा रहा है।

इसका अर्थ यह नहीं कि हर बीमारी का इलाज विटामिन, पाउडर या कैप्सूल से किया जा सकता है। इसका वास्तविक उद्देश्य है—पोषण की स्थिति को समझना, कमी को पहचानना, भोजन की गुणवत्ता सुधारना और ऐसे आहार का चयन करना जो मेटाबोलिज्म और दीर्घकालिक स्वास्थ्य के लिए बेहतर हो।

विश्व स्वास्थ्य संगठन विविध और संतुलित भोजन को आधार मानता है तथा प्रतिदिन लगभग 400 ग्राम फल और सब्जियों के सेवन की सलाह देता है। दालें, साबुत अनाज, मेवे, बीज और अन्य प्राकृतिक खाद्य पदार्थ भी महत्वपूर्ण हैं।

लेकिन यहीं बाजार और विज्ञान अलग हो जाते हैं। आज "Longevity", "Anti-ageing" और "Cellular Health" के नाम पर अनेक सप्लीमेंट बेचे जा रहे हैं। कुछ परिस्थितियों में सप्लीमेंट आवश्यक हो सकते हैं—जैसे किसी पोषक तत्व की प्रमाणित कमी। लेकिन स्वस्थ व्यक्ति के लिए हर सप्लीमेंट को जीवन बढ़ाने वाली औषधि मान लेना वैज्ञानिक रूप से उचित नहीं है।

Nutritional Medicine विज्ञान है; हर Nutritional Product विज्ञान नहीं है।

इसलिए दीर्घायु की शुरुआत किसी महंगी बोतल से नहीं, बल्कि रोज की थाली से होती है।

अन्नमय कोश से प्राणमय तक

तैत्तिरीय उपनिषद मनुष्य को पांच कोशों—अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनंदमय—के माध्यम से देखने की एक गहरी दार्शनिक दृष्टि देता है। इन्हें आधुनिक शरीर-विज्ञान का प्राचीन वैज्ञानिक मॉडल कहना उचित नहीं होगा। लेकिन यह विचार महत्वपूर्ण है कि मनुष्य को केवल शरीर के रूप में नहीं समझा जा सकता। अन्नमय हमें शरीर और भोजन की ओर ले जाता है। प्राणमय जीवन की ऊर्जा और श्वास की ओर। मनोमय मानसिक अनुभव की ओर। विज्ञानमय विवेक और समझ की ओर और आनंदमय जीवन के गहरे संतोष की ओर संकेत करता है। आधुनिक विज्ञान की भाषा अलग है, लेकिन स्वस्थ उम्र की चर्चा करते समय वह भी भोजन, फिजिकल एक्टिविटी, नींद, मेंटल हेल्थ और सामाजिक संबंधों को एक साथ देखता है।

चलता शरीर, जागता मन

उम्र बढ़ने के साथ मांसपेशियों की ताकत और शारीरिक क्षमता में कमी स्वाभाविक हो सकती है। लेकिन निष्क्रिय जीवनशैली इस

प्रक्रिया को तेज कर सकती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन वयस्कों के लिए सप्ताह में 150-300 मिनट की मध्यम तीव्रता वाली शारीरिक गतिविधि और कम से कम दो दिन मांसपेशियों को मजबूत करने वाले व्यायाम की सलाह देता है।

इसके लिए महंगा जिम जरूरी नहीं। तेज चाल से चलना, योग, तैरना, साइकिल चलाना, सीढ़ियां चढ़ना और नियमित शारीरिक श्रम भी उपयोगी हैं। इसी तरह नींद शरीर की केवल आराम की अवस्था नहीं है। पर्याप्त नींद स्मृति, प्रतिरक्षा, चयापचय और मानसिक स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है। अधिकांश वयस्कों के लिए कम से कम सात घंटे की नियमित नींद एक महत्वपूर्ण आधार है।

स्वस्थ उम्र किसी एक बड़े प्रयास से नहीं, रोज की छोटी आदतों से बनती है।

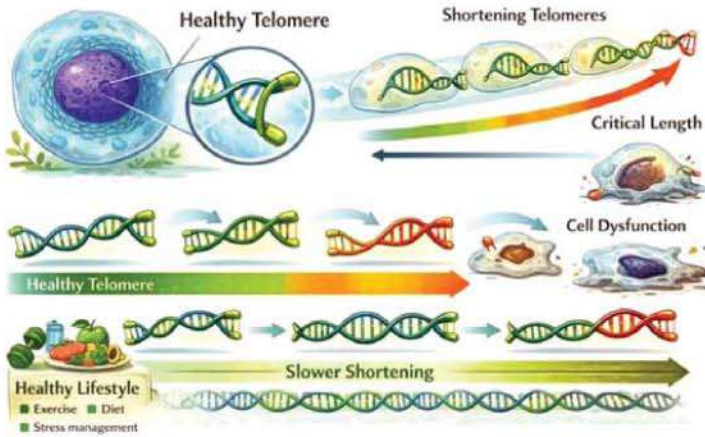
मार्कण्डेय से ययाति तक—दीर्घायु होने का प्रश्न

भारतीय पुराणों में दीर्घायु की आकांक्षा का सबसे प्रसिद्ध उदाहरण मार्कण्डेय हैं। परंपरा में वर्णित कथा के अनुसार मार्कण्डेय अल्पायु के लिए नियत थे। उन्होंने शिव की आराधना की और कथा में शिव द्वारा उन्हें मृत्यु से बचाने तथा दीर्घ जीवन प्रदान करने का वर्णन मिलता है। इसे आधुनिक चिकित्सा का प्रमाण नहीं कहा जा सकता। लेकिन यह कथा बताती है कि भारतीय सांस्कृतिक चेतना में दीर्घ जीवन की इच्छा और मृत्यु पर चिंतन कितना प्राचीन है।

लेकिन इसके बाद ययाति की कथा एक और गहरा प्रश्न उठाती है। वृद्धावस्था से बचने के लिए ययाति ने अपने पुत्र से युवावस्था प्राप्त की और फिर भोग में जीवन बिताया। लेकिन अंततः उन्हें यह समझ आया



How Telomeres Work



कि इच्छाएं भोग से समाप्त नहीं होतीं। यह कथा मानो पूछती है—यदि शरीर को फिर से युवा बना दिया जाए, तो क्या जीवन अपने आप सार्थक हो जाएगा?

मार्कण्डेय की कथा जीवन को बचाने की आकांक्षा है। ययाति की कथा उस आकांक्षा की सीमा। एक कहती है—जीवन चाहिए। दूसरी पूछती है—लेकिन किसलिए? यहीं Longevity का सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न सामने आता है—More Years या More Life?

रसायन: एंटी-एजिंग से कहीं व्यापक

आयुर्वेद कारसायन भी इसी संदर्भ में महत्वपूर्ण है। इसे आज के बाजार में बिकने वाले 'एंटी-एजिंग' उत्पादों का पर्याय बना देना उचित नहीं होगा। रसायन की पारंपरिक अवधारणा स्वास्थ्य, पोषण, बल और दीर्घायु से जुड़ी व्यापक दृष्टि रखती है। आधुनिक शोध में कुछ रसायन द्रव्यों और वनस्पतियों के जैविक प्रभावों का अध्ययन जारी है, लेकिन प्रारंभिक प्रयोगशाला या सीमित मानव-अध्ययनों को सिद्ध स्तुष्टि देना जल्दबाजी होगी। विज्ञान का नियम सरल है—दावा जितना बड़ा, प्रमाण उतना मजबूत होना चाहिए।

उम्र बढ़ती क्यों है?

आधुनिक जीवविज्ञान बताता है कि उम्र बढ़ना किसी एक कारण का परिणाम नहीं है। कोशिकीय क्षति, जीनोमिक अस्थिरता, माइटोकॉन्ड्रियल बदलाव, कोशिकीय वृद्धावस्था, सूजन और शरीर की मरम्मत क्षमता में कमी जैसी अनेक प्रक्रियाएं इसमें भूमिका निभाती हैं। टेलोमीयर पर भी व्यापक शोध हुआ है, लेकिन उन्हें अकेला 'उम्र का

मीटर' मानना वैज्ञानिक रूप से सही नहीं है।

इसी तरह जीन महत्वपूर्ण हैं, लेकिन वे हमारी पूरी नियति तय नहीं करते। भोजन, शारीरिक सक्रियता, नींद, तनाव, पर्यावरण और सामाजिक संबंध भी लंबे समय के स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। इसका अर्थ

यह नहीं कि उम्र बढ़ने को रोका जा सकता है। अर्थ यह है कि स्वस्थ तरीके से उम्र बढ़ने की दिशा को प्रभावित किया जा सकता है।

दीर्घायु होने का अर्थ जीवन का उद्देश्य हो -

भारतीय दर्शन ने जीवन को केवल भोग के रूप में नहीं देखा। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—चार पुरुषार्थ जीवन के विभिन्न उद्देश्यों में संतुलन की बात करते हैं। इस दृष्टि से जीवन की लंबाई तभी मूल्यवान है जब उसमें अनुभव, संबंध, सीखने, योगदान और आत्म-विकास के लिए समय हो। इसलिए 90 वर्ष की उम्र अपने आप में उपलब्धि नहीं है। यदि व्यक्ति स्वस्थ है, चल सकता है, सोच सकता है, संबंध निभा सकता है, सीख सकता है और जीवन को अर्थपूर्ण मानता है—तभी वह अतिरिक्त समय वास्तव में जीवन बनता है।

Longevity: विज्ञान और भारतीय दृष्टि में

आधुनिक विज्ञान हमें शरीर के स्तर पर स्वस्थ उम्र बढ़ने के अनेक रास्ते दिखाता है। आयुर्वेद हमें भोजन, दिनचर्या और स्वास्थ्य-संरक्षण की परंपरा से जोड़ता है। उपनिषद् मनुष्य को शरीर से आगे देखने का दार्शनिक विस्तार देते हैं। पुराण हमें यह पूछने की प्रेरणा देते हैं कि जीवन लंबा होने के बाद उसका उद्देश्य क्या होगा। इन सबको मिलाकर कोई चमत्कारी सूत्र नहीं बनता। बल्कि एक बहुत सरल तस्वीर सामने आती है—

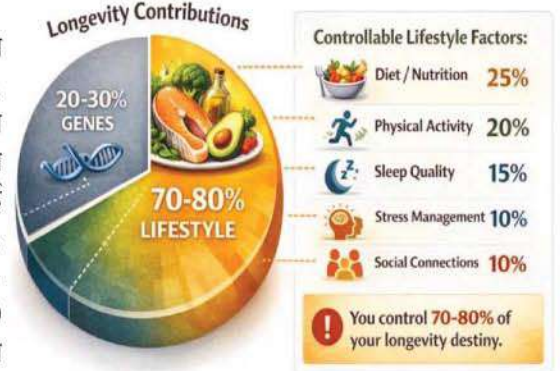
संतुलित भोजन, नियमित गतिविधि, पर्याप्त नींद, मानसिक संतुलन, अच्छे संबंध, निरंतर सीखना और जीवन का

उद्देश्य।

यही स्वस्थ दीर्घायु की सबसे मजबूत बुनियाद है। और यही वह जगह है जहां हमें Longevity Industry से भी सावधान रहना चाहिए। हर 'एंटी-एजिंग' दावा वैज्ञानिक नहीं होता। हर सप्लीमेंट जीवन नहीं बढ़ाता। हर 'डिटॉक्स' शरीर को शुद्ध नहीं करता।

सवाल उम्र का नहीं, जीवन का है

हम उम्र को रोक नहीं सकते। चेहरे पर समय की रेखाएं आएंगी। बाल सफेद होंगे। शरीर बदलेगा। कोशिकाएं धीमी होंगी। लेकिन हम यह जरूर प्रभावित कर सकते हैं कि उम्र बढ़ने के साथ हमारी जीवन-क्षमता कितनी देर तक बनी रहे। क्या 70 की उम्र में भी हम स्वतंत्र होकर चल सकेंगे? क्या 80 में भी सीखने की इच्छा रहेगी? क्या हमारे संबंध जीवित रहेंगे? क्या हमारे पास जीने का कोई कारण होगा? शायद दीर्घायु का असली अर्थ



यहीं छिपा है।

मार्कण्डेय हमें जीवन की रक्षा की आकांक्षा देते हैं। ययाति हमें उसकी सीमा समझाते हैं। आयुर्वेद स्वास्थ्य-संरक्षण की राह दिखाता है। उपनिषद् जीवन को भीतर से देखने की दृष्टि देता है। और आधुनिक विज्ञान हमें उस जीवन को अधिक समय तक स्वस्थ रखने के साधन खोज रहा है।

इसलिए लक्ष्य केवल ज्यादा साल जीना नहीं होना चाहिए। लक्ष्य होना चाहिए—उम्र बढ़े तो शरीर की क्षमता बनी रहे। शरीर बदले तो मन की जिज्ञासा बनी रहे। बाल सफेद हों तो संबंधों की गर्माहट बनी रहे। और जीवन के अंतिम वर्षों तक जीने का अर्थ बना रहे दीर्घायु का अर्थ वर्षों को जीवन में जोड़ना भर नहीं है। असली दीर्घायु वह है, जब हम अपने वर्षों में अधिक जीवन जोड़ सकें।

यही स्वस्थ दीर्घायु है।—जीवन को लंबा नहीं, गहरा जीने की कला है।

फ़िल्में हमारे युवाओं को किस दिशा में ले जा रहा है?

हनुमान अंश से टॉक्सिक तक



एक सवाल आपसे

अगर एक युवा रोज स्क्रीन पर हिंसा देखे, सेक्स को मनोरंजन के रूप में देखे, नशे और अपराध को जीवनशैली की तरह प्रस्तुत होते देखे और हर समस्या का समाधान ताकत या बदले में खोजता हुआ किरदार देखे तो क्या इन तस्वीरों का उसके मन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता?

हम अक्सर कहते हैं— 'अरे, यह तो सिर्फ फिल्म है।' बिल्कुल, फिल्म को फिल्म की तरह देखना चाहिए। लेकिन यह भी सच है कि सिनेमा हमारी कल्पना, भाषा, फैशन और जीवनशैली पर प्रभाव डालने वाली शक्तिशाली सांस्कृतिक ताकतों में से एक है। इसलिए सवाल यह नहीं कि फिल्म किसी युवा को सीधे हिंसक या नशेड़ी बना देती है। सवाल यह है कि, हमारी फिल्मों में दिखाई

सवाल यह है कि, हमारी फिल्मों में दिखाई जाने वाली दुनिया युवा मन के सामने किस तरह के विकल्प और आदर्श रख रही है? इसी सवाल के साथ दो बिल्कुल अलग फिल्मों को देखना दिलचस्प है—'हनुमान अंश' और 'टॉक्सिक'।

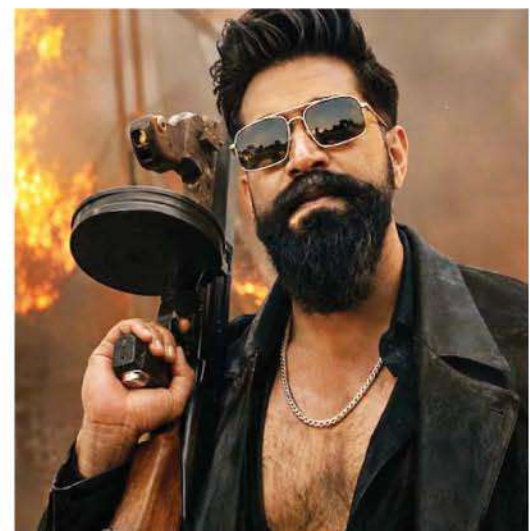
जाने वाली दुनिया युवा मन के सामने किस तरह के विकल्प और आदर्श रख रही है? इसी सवाल के साथ दो बिल्कुल अलग फिल्मों को देखना दिलचस्प है—'हनुमान अंश' और 'टॉक्सिक'।

'हनुमान अंश' की सबसे बड़ी खूबी उसकी सोच में है। यह फिल्म हनुमान जी को केवल शक्ति, चमत्कार और

पराक्रम के प्रतीक के रूप में देखने के बजाय भक्ति, सेवा, प्रेम और मानवता की तरफ ले जाने का प्रयास करती है। फिल्म का आध्यात्मिक आधार नीम करोली बाबा के व्यक्तित्व और उनकी हनुमान भक्ति से जुड़ता है। यहाँ धर्म किसी दूसरे के विरुद्ध खड़े होने की चीज नहीं है। यह भीतर झाँकने की प्रक्रिया है। आज जब धार्मिक सिनेमा को अक्सर भव्यता, चमत्कार और बड़े युद्ध-दृश्यों से जोड़ दिया जाता है, वहाँ 'हनुमान अंश' अपेक्षाकृत सरल रास्ता चुनती है। यह पूछती है— भक्ति का परिणाम क्या होना चाहिए? अगर पूजा के बाद भी हमारे भीतर करुणा नहीं आती, अगर शक्ति मिलने के बाद भी हम कमजोर के साथ खड़े नहीं होते, अगर धर्म हमें बेहतर मनुष्य नहीं बनाता— तो फिर

हमारी भक्ति अधूरी है। यह फिल्म बड़े स्टार या बड़े ड्रस्त्रङ्ग के सहारे दर्शक को प्रभावित करने की कोशिश से ज्यादा एक विचार और आध्यात्मिक अनुभव को सामने रखने की कोशिश करती है। यही इसकी ताकत है। आज के समय में जब युवा सफलता, पैसा और पहचान की दौड़ में उलझा है, तब 'हनुमान अंश' यह याद दिलाती है कि जीवन की सार्थकता केवल पाने में नहीं, देने में भी है।

अब इसी के बिल्कुल विपरीत दुनिया में प्रवेश कीजिए। यहाँ भक्ति की जगह शक्ति है। करुणा की जगह हिंसा है। और आत्मसंयम की जगह कई बार बदला, अपराध और वर्चस्व दिखाई देता है। 'टॉक्सिक' की दुनिया



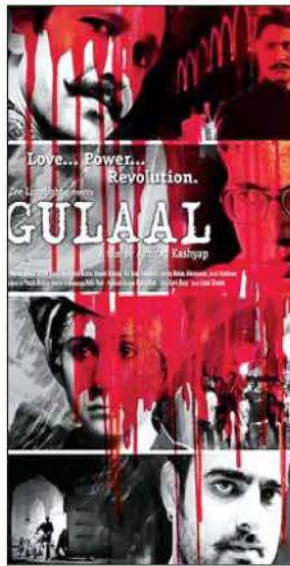
दर्शक को आकर्षित करती है क्योंकि यह चमकदार भी है और अंधेरी भी। फिल्म की सबसे बड़ी ताकत उसका स्टाइल और विजुअल ट्रीटमेंट है। बड़े पर्दे पर इसकी हिंसक दुनिया और एक्शन प्रभाव पैदा करते हैं। यश की स्क्रीन प्रेजेंस भी फिल्म को ऊर्जा देती है। लेकिन यहीं एक महत्वपूर्ण सवाल पैदा होता है— क्या फिल्म हिंसा को दिखा रही है, या कहीं-कहीं उसे आकर्षक भी बना रही है?

यह अंतर बहुत महत्वपूर्ण है। किसी फिल्म में हिंसा होना अपने आप में समस्या नहीं है। अपराध की दुनिया पर बनी फिल्म में हिंसा कहानी का हिस्सा हो सकती है। समस्या तब पैदा होती है जब हिंसा के परिणामों से ज्यादा उसकी भव्यता और रोमांच दर्शक के सामने आता है। 'टॉक्सिक' की आलोचना इसी नजरिए से की जा सकती है। फिल्म में कहानी और चरित्रों की संभावनाएँ हैं, लेकिन कई जगह स्टाइल कहानी पर भारी पड़ता हुआ महसूस हो सकता है।

❖ क्या 'टॉक्सिक' युवाओं को हिंसा की ओर धकेलती है?

ऐसा सीधा दावा करना उचित नहीं होगा। की एक फिल्म देखकर कोई व्यक्ति अपराधी या हिंसक नहीं बन जाता। युवा के व्यवहार पर परिवार, मित्र, शिक्षा, समाज, सोशल मीडिया, आर्थिक परिस्थितियाँ और व्यक्तिगत अनुभव जैसे अनेक कारक प्रभाव डालते हैं। लेकिन सिनेमा के सामने एक दूसरा प्रश्न जरूर रखा जा सकता है— क्या बार-बार हिंसा को ग्लैमर, ताकत और सफलता से जोड़कर दिखाना युवाओं की हिंसा के प्रति संवेदनशीलता को प्रभावित कर सकता है? यह एक विचारणीय प्रश्न है। इसी तरह सेक्स और भोगवादी जीवनशैली को लेकर भी बात केवल नैतिकता के चश्मे से नहीं होनी चाहिए। वयस्क संबंधों या यौन विषयों को सिनेमा में दिखाना अपने आप में गलत नहीं है। सवाल है कि उसे किस संदर्भ में दिखाया जा रहा है? क्या वह कहानी और चरित्र को समझने में मदद करता है? या केवल दर्शक का ध्यान खींचने का माध्यम बन जाता है? यहीं सिनेमा की जिम्मेदारी का प्रश्न उठता है।

मगर एक चर्चा तो होती ही है कि फिल्में युवाओं में आक्रोश और भोग की संस्कृति उत्पन्न कर रही हैं क्योंकि आज का युवा कई स्तरों पर दबाव में है। शिक्षा की प्रतिस्पर्धा है। करियर की चिंता है। रोजगार की चुनौती है।



Rang De Basanti



‘हनुमान अंश’ और ‘टॉक्सिक’ को साथ देखना दिलचस्प है एक फिल्म कहती है— शक्ति का अर्थ सेवा भी हो सकता है। दूसरी दुनिया दिखाती है— शक्ति जब अपराध और वर्चस्व से जुड़ती है तो कितनी हिंसक हो सकती है।

सोशल मीडिया पर लगातार तुलना है। और सफलता की एक ऐसी तस्वीर है जिसमें पैसा, शरीर, ग्लैमर और तत्काल सुख को बहुत महत्व मिलता दिखाई देता है। ऐसे माहौल में अगर मनोरंजन का बड़ा हिस्सा भी लगातार यही संदेश देने लगे कि— शक्ति रखो, सब हासिल करो, तुरंत सुख लो और अपनी इच्छा के रास्ते में आने वाले को हटा दो— तो इस सांस्कृतिक वातावरण पर चर्चा जरूरी हो जाती है — क्या हमारा मनोरंजन उन प्रवृत्तियों को चुनौती दे रहा है या उन्हें सामान्य और आकर्षक बनाकर प्रस्तुत कर रहा है? यही फर्क महत्वपूर्ण है। क्योंकि शिक्षा संस्थाएँ केवल किताबों से नहीं बनती। युवा जिस पूरे सांस्कृतिक वातावरण में जीता है, वही उसके विचारों और आकांक्षाओं को भी प्रभावित करता है।

इसलिए 'हनुमान अंश' और 'टॉक्सिक' को साथ देखना दिलचस्प है एक फिल्म कहती है— शक्ति का अर्थ सेवा भी हो सकता है। दूसरी दुनिया दिखाती है— शक्ति जब अपराध और वर्चस्व से जुड़ती है तो कितनी हिंसक हो सकती है। एक तरफ संयम, सेवा और आत्मिक शांति की कल्पना है। दूसरी तरफ पैसा, अपराध, हिंसा और सत्ता की बेचैन दुनिया। और इनके बीच खड़ा है—

आज का युवा।

वह तय कर रहा है कि उसे किस तरह की जिंदगी चाहिए। इसलिए सवाल केवल फिल्मकारों से नहीं है। सवाल माता-पिता से भी है। शिक्षकों से भी है। शिक्षण संस्थानों से भी है। समाज से भी है।

और स्वयं युवाओं से भी है। हम उन्हें केवल यह क्यों बताते हैं कि क्या मत देखो? हमें यह भी बताना होगा कि— क्या देखना चाहिए, क्यों देखना चाहिए और देखकर सोचना कैसे चाहिए।

'हनुमान अंश' और 'टॉक्सिक' दो अलग सिनेमाई अनुभव हैं। एक हमें भीतर की दुनिया देखने का अवसर देती है। दूसरी बाहर की उस दुनिया को दिखाती है जहाँ शक्ति, अपराध और हिंसा का खेल चलता है। दोनों को पसंद या नापसंद करना दर्शक की अपनी पसंद है। लेकिन एक बात तय है— अच्छी फिल्म वह नहीं जो केवल हमें दो घंटे व्यस्त रखे। अच्छी फिल्म वह है जो थिएटर से बाहर निकलने के बाद भी हमारे भीतर कोई सवाल छोड़ जाए। और आज का सबसे जरूरी सवाल शायद यही है— हम अपने युवाओं के हाथ में केवल स्क्रीन दे रहे हैं या उन्हें यह समझने की दृष्टि भी दे रहे हैं कि उस स्क्रीन पर दिखाई देने वाली दुनिया में क्या अपनाना है और क्या छोड़ देना है? क्योंकि युवा का आक्रोश भी वास्तविक है, उसकी आकांक्षाएँ भी वास्तविक हैं और उसकी भोग की ओर बढ़ती इच्छाओं, नशे, हिंसा और डिजिटल दुनिया के प्रभाव को लेकर हमारी चिंताएँ भी वास्तविक हैं। इसलिए सिनेमा को दोष देने से पहले हमें समाज को देखना होगा— और समाज को दोष देने से पहले यह देखना होगा कि हम अपने युवाओं के सामने कौन-से आदर्श रख रहे हैं।

कुरुक्षेत्र बदल गया है महाभारत आज भी जारी है



क्या आपने कभी सोचा है कि हमारे भीतर एक ऐसा युद्ध चलता है, जिसकी आवाज बाहर सुनाई नहीं देती? न कोई तलवार खिंचती है, न कोई शंख बजता है। कोई रथ दौड़ता दिखाई नहीं देता, फिर भी हर दिन एक युद्ध होता है।

एक निर्णय लेना होता है—सच बोलें या बात छिपा दें। किसी ने अपमान किया—क्षमा करें या बदला लें। अवसर मिला—ईमानदारी चुनें या अपने स्वार्थ का रास्ता। किसी अपने से मतभेद हुआ—रिश्ता बचाएं या अपना अहंकार। और सबसे कठिन सवाल तब सामने आता है, जब हमें पता होता है कि सही क्या है, लेकिन सही करना हमारे लिए आसान नहीं है।

यही वह क्षण है, जब शायद हमारे भीतर महाभारत शुरू होता है। जिस युद्ध को हम इतिहास समझते हैं, शायद वह आज भी हमारे

भीतर लड़ा जा रहा है

हम अक्सर कहते हैं—महाभारत हजारों वर्ष पहले हुआ था। कुरुक्षेत्र में पांडव और कौरव आमने-सामने खड़े हुए थे। अठारह दिनों तक युद्ध चला और अंततः पांडव विजयी हुए। लेकिन क्या सचमुच उस दिन महाभारत समाप्त हो गया था? अगर महाभारत समाप्त हो गया था, तो अर्जुन का भ्रम आज भी हमारे भीतर क्यों दिखाई देता है?

श्रीकृष्ण का उपदेश आज भी हमारे निर्णयों में रास्ता क्यों दिखाता है? दुर्योधन का अहंकार आज भी हमारे व्यवहार में क्यों दिखाई देता है? धृतराष्ट्र का मोह आज भी हमें सत्य से आंखें मूंदने के लिए क्यों मजबूर करता है? और सबसे बड़ा प्रश्न — क्या कुरुक्षेत्र वास्तव में केवल एक स्थान था, या वह मनुष्य के भीतर मौजूद एक अवस्था है?

यही प्रश्न महाभारत को इतिहास की

हमारे भीतर एक दुर्योधन है, जो गलत जानते हुए भी अपने अहंकार से समझौता नहीं करना चाहता। एक धृतराष्ट्र है, जो मोह में सत्य को देखने से बचता है। एक कर्ण है, जिसकी पीड़ा और परिस्थितियां उसे ऐसे निर्णयों से बांध देती हैं, जिनका परिणाम वह स्वयं भी जानता है।

सीमा से निकालकर हमारे वर्तमान जीवन के बीच ला खड़ा करता है। शायद महाभारत की सबसे बड़ी खूबसूरती यही है कि इसे पढ़ते हुए हमें केवल पांडव और कौरव दिखाई नहीं देते; धीरे-धीरे हमें अपना चेहरा भी दिखाई देने लगता है।

हमारे भीतर एक दुर्योधन है, जो गलत जानते हुए भी अपने अहंकार से समझौता नहीं करना चाहता। एक धृतराष्ट्र है, जो मोह में सत्य को देखने से बचता है। एक कर्ण है, जिसकी पीड़ा और परिस्थितियां उसे ऐसे निर्णयों से बांध देती हैं, जिनका परिणाम वह स्वयं भी जानता है। एक भीष्म है, जो सत्य को पहचानता है, लेकिन परिस्थितियों और प्रतिज्ञाओं के कारण कई बार मौन हो जाता है। और एक अर्जुन भी है—जो सही और गलत के बीच खड़ा होकर पूछता है—‘मैं क्या करूं?’ यही प्रश्न शायद हममें से हर व्यक्ति ने अपने जीवन में कभी न कभी पूछा है। यहीं से गीता शुरू होती है। और यहीं से महाभारत हमारे लिए केवल एक प्राचीन कथा नहीं रहता। वह मनुष्य के मन का दर्पण बन जाता है।

कुरुक्षेत्र की धरती बदल गई है। हमारे युद्ध के हथियार भी बदल गए हैं। आज हमारे हाथ में गांडीव नहीं, मोबाइल है; सामने रथ नहीं, आधुनिक जीवन की दौड़ है; लेकिन संघर्ष वही है—सत्य और सुविधा के बीच, कर्तव्य और स्वार्थ के बीच, विवेक और अहंकार के बीच। इसलिए सवाल यह नहीं है कि महाभारत में कौन जीता था। सवाल यह है— आज हमारे भीतर कौन जीत रहा है?



www.phzinfo.com

Positive Health Zone

Integrated Holistic
Health Care System

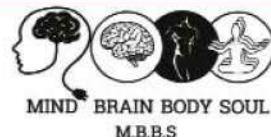
Unique Wellbeing Center



Holistic Healthcare Team

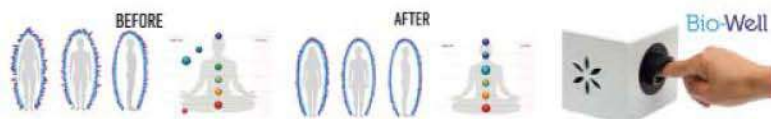
Our INTEGRATED SERVICES

Holistic Path Of Wellness & Wellbeing



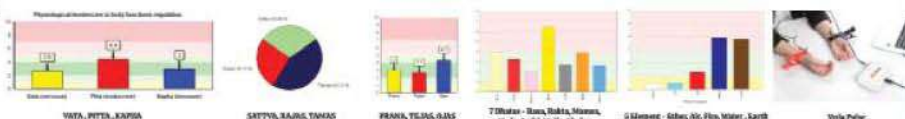
1 Personal Energy Blueprint at Quantum Veda Lab with Latest Quantum Devices-

Aura, Chakra, Biofield,
LifeForce Energy Analysis.



2 Digital Nadi Parikshan Modern Nadi Veda Pulse -

Personality Analysis
Body Type, Mind
Type, Energy Type.



3 Life Style Clinic

Personalised Diet Plan, Lifestyle
Plan, Day Plan, Detox Plan as
per your Quantum Analysis.



4 Body Detox & Rejuvenation with Kerala Ayurveda Panchkarma.



5 Mind Detox & Stress Management with NLP & Counselling.



6 Inner Alingment, Chakra Balancing with PNP Meditation.



Get In Touch
9109185028, 9109185025



A-41, Amrapali Society,
Near Ganga Diagnostics, Raipur, Chhattisgarh

www.phzinfo.com



छत्तीसगढ़ शासन

श्री विष्णु देव साय
माननीय मुख्यमंत्री, छत्तीसगढ़श्री नरेन्द्र मोदी
माननीय प्रधानमंत्री

छत्तीसगढ़ में
उद्योग स्थापना की प्रक्रिया है

बेहद आसान

सिंगल विंडो 2.0

सरल, तेज और पारदर्शी



उद्योग स्थापना से जुड़ी
150+ सेवाएं
और सभी आवश्यक
अप्रूवल



सिर्फ एक क्लिक पर...

अधिक जानकारी
के लिए
क्यूआर कोड
स्कैन करें



सिंगल विंडो 2.0 के फायदे



समयबद्ध
निपटान



पूरी प्रक्रिया
डिजिटल



रियल टाइम
ट्रैकिंग और
अपडेट



एक ही
प्लेटफॉर्म पर
सभी सेवाएं



उद्योगों के लिए
अनेक सरकारी प्रोत्साहन



कम समय
कम प्रयास



सुरक्षित
और विश्वसनीय



सरकार आपके
साथ हर कदम पर

नया छत्तीसगढ़, नए अवसर, नई उड़ान